

कवि-श्री माला

• सिन्धी •

कवि

किशिनचन्द बेवसि

सम्पादक—अनुवादक

देवदत्त पृन्दाराम शर्मा



राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक

मोहनलाल नन्दा

मंत्री

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

हिन्दीनगर, बर्मा

• • •

सर्वधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण—१९९९

मई, १९९२

मूल्य—रु. २/-

• • •

मुद्रक

मोहनलाल नन्दा

राष्ट्रभाषा प्रेस

हिन्दीनगर, बर्मा

• • •

हर्मक विषय है कि राष्ट्राभावा-प्रचार-समिति वर्षी अपने कार्य काछके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जाभ्याके रजत-जयन्ती मङ्गलसूचके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके भाष्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट व्यक्त्यका परिचय कवि-श्री माछा^१ की पञ्चीस पुस्तकमें हिन्दी गद्यमुद्रा सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ कव्य-सर्जकका निश्चय करना एक कठिन कार्य है फिर भी अपनी सीमाओंके ध्यानमें रखते हुए गम्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनकर कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविई रचनाओंका चयन किया गया है उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कवियोंका चुनाव किया गया है उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य—इस तराईसे एक विभाजन-रेखा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि हमारा सन् १९२० के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रचलित विचार-धारामें एक विज्ञेय प्रसरण अछावा-संघ घटा जाता है।

सिन्धीमें कुछ ऐसी विशिष्ट ध्वनियाँ हैं जो देवनागरी लिपिमें नहीं हैं। उन ध्वनियोंके प्रस्तुत पुस्तकमें निम्नलिखित रूपमें व्यवहृत किया गया है:—

- म—सघोष अक्षराञ्च अन्तःस्फुटित लोमह-ताह्वय स्पर्श ध्वनि, यथा—ग्रेष्ठ।
- ख—सघोष अक्षराञ्च, अन्तःस्फुटित कठिन-ताह्वय स्पर्श संवर्ध यथा—अङ्ग।
- ह—सघोष अक्षराञ्च अन्तःस्फुटित मूर्धन्य स्फोटक स्पर्श, यथा—कैटो।
- ब—सघोष अक्षराञ्च, अन्तःस्फुटित द्यौर्ध्व स्पर्श यथा—बध्ने।

श्री देवदत्त कुन्दराम जर्षाजामे प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यके चुनके कव्योंकाके सम्पादित तथा अनुदित का सभी साधकोंके इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित चित्र का कलंक सम्पादक 'हिन्दुस्तान' (सिन्धी दैनिक) बम्बईके सद्भवत्वमें उपलब्ध हुआ है। संयोजकी आवश्यक डिजाइन्को बनवा देनेमें श्री इरी एम्. अडमकरजी (डीन, घर नं ३ इन्स्टीट्यूट आफ् अप्लाइड आर्ट, बम्बई) का उत्तर सहयोग मिल्य है उसके लिए समिति साधकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त कर्षा तथा अभ्यास दृष्टिपूर्वक जिन-जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिल्य है उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आज है, प्रस्तुत संग्रह पाठकोंके रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

हिन्दुस्तान २१

मन्त्री,

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, लार्ड

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
सिन्धी-साहित्य परिचय	१
कवि-परिचय	२५
काव्य-संख्येय	४९

कवि-श्री माछा
सिन्धी



किशिनचन्द 'बेवसि'

सिन्धी साहित्य परिचय

सिन्धी भाषा और उसका साहित्य

• • •

अब तक सिन्धी भाषामें सिन्धी साहित्यके इतिहासपर कोई पुष्पक प्रकाशित नहीं हुई। श्री मिर्दीक मुहम्मद मेमणने काव्यक इतिहासक दो भाषोंमें पुष्पक लिखे हैं जिसका मातृभाषा सिन्धीके श्रुती मूल भाषा अशुद्ध कवीक की पुस्तिकामें दे दिया गया है, लेकिन हममें १९२ के पहलक कवियोंका ही आभास मात्र है। १९० म केवर आज तक सिन्धी भाषाके कवियों कवि इन क्षेत्रका सर्वोच्च समूह बना रहूँ है। लेकिन १९ ० ई म केवर आज तकके कालकी हम हिन्दीकी तरह घघराए ही बहोसे क्योंकि हम अक्षरमें घघरी ओसा घघरा ही बोलबाला रहा है। आज सिन्धीम घघ भी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध है, फिर भी हमें कहना ही पड़ेगा कि यह युग 'घघरा युग' अथवा आधुनिक युगके गायन ही सम्बाधित किया जा सकता है।

गद्यकाल का आरम्भ

ब्रिटिश सिन्धीर १८४३ ई में विजय पाई। अन्य आकाशक बापोंके साथ उनका ध्यान साहित्यकी ओर भी आकृष्ट हुआ लेकिन उन दिनों सिन्धी भाषाक लिए कोई निश्चित विधि निर्धारित न थी। मुगलमान इस भाषाकी पद्यमी अथवा अरबीमें

लिखा करते थे और ब्राह्मण नामरीमें लिखाई मुहम्मदीमें तथा व्यापारी मुहब्बा (बिना मात्राओं वाली) लिपिमें लिखा करते थे। १८१३ में सिन्धी भाषाके लिए लिपि निर्धारित की गई और तबसे सिन्धी भाषामें साहित्य निर्माणके छिटपुट प्रयत्न चल रहे हैं। सर्वप्रथम सिन्धी विभागकी ओरसे पाठ्य पुस्तकोंकी रचना हुई और कुछ पुस्तकें हिन्दी और फारसीसे अनुवित की गईं।

१८१३ से १९ • तक जो साहित्य निर्माण हुआ उसे हम संक्रमण कालीन साहित्य कह सकते हैं। विद्वानोंका मत है कि आरम्भमें मराठी कई पुस्तकें देवनागरी लिपिमें लिखी गईं थी परन्तु मराठी लिपि सिन्धीकी लिपि बन जानेके कारण देवनागरी लिपिको बड़ी ही कठिनाई पड़ी थी। अब सारा सरकारी कार्य इस लिपिमें होने लगा। अठ्ठासीकरियाँ भी उन्हें मिलने लगीं जो इस लिपिके जानकार थे। इन्हीं कारणोंसे देवनागरीमें हस्तलिखित पुस्तकें छड़ने लगीं अंग्रेजोंके समयमें जो देवनागरीमें पुस्तकें छपीं उनमेंसे निम्नलिखित कुछ पुस्तकोंका कभी-कभी वर्णन हो जाता है —

(१) सिन्धी-इंग्लिश डिक्शनरी — ईप्टन स्टैंक (बम्बईमें मुद्रित) १८१५

(२) सिन्धी बोलीच जो ग्रामर " " "

इसी व्याकरणके अन्तिम पृष्ठोंपर आकाशी राह दिपाच ऐ सोचि की छपी ॥ जो शायद सिन्धी साहित्यकी पहली कहानी है।

(३) 'मरी' (पाँस्पक आफ मीथ्यू) का सिन्धी अनुवाद—ईप्टन स्टैंक १८१०

(४) इंग्लिश-सिन्धी डिक्शनरी (ईप्टन स्टैंक) बम्बई, १८४९

(५) सिन्धी बोलीच जो ग्रामर (डा ट्रिव्स लन्डन और लीपट्रिगमें छपी १८७२) मराठी लिपि बननेके बाद भी कुछ पुस्तकें देवनागरी लिपिमें छपीं।

(६) इंग्लिश-सिन्धी डिक्शनरी (ल व पयजने) १८६३

(७) सिन्धी-इंग्लिश डिक्शनरी (रेबरड सर्ट उच्चारण बाबरदास और स फ. मिर्जा १८७९)

(८) अरब धातू (सिन्धीके संस्कृत मूल धातु) रेबरड सर्ट

(९) सिन्धी ग्रामर (बी अमटमक) १८९२

(१०) Dictionary of Sindhi derivatives (अमटमक नाकमक) १८९२ आदि।

इसके अलावा सिन्धी बोली कला तककी पाठ्य पुस्तकें सरकार द्वारा देवनागरी लिपिमें भी छपीं रहीं।

प्रियतम धर्म तथा धिक्कारपुरवालोंमें भी देवनागरी लिपिमें कम्पाओंके लिए पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित कराईं।

सन् १८७४ में मुहम्मद हुसन मोहम्मद कासिम क्रोवीने भने जमीदार की गासिह सैय्यद मीरां मुहम्मद शाहने मुधानूरे ऐं मुधानूरे जी गासिह (१८११)

या मुघीर बस सदियाँ (१८६१) नामक पुस्तकें लिखीं। ये तीनों पुस्तकें इन्दीसे अनुवित की गई थी। मुग़ली नबीराम मीरानीने तारीख मंसूमी का शरहीसे अनुवाद किया था। १८६१ में सिन्धके हिन्दी एज्यूकेशन इन्स्पेक्टर भी आरामन जयप्राप (महाराष्ट्र निवासी) ने सिन्धु जो निरिबाह नामक मौलिक पुस्तक लिखी। १८६० ई में बीबान कौड़ोमल बम्भनमलने 'कोलम्बस की तारीख' नामक पुस्तकका अंग्रेजीसे अनुवाद किया और स्त्री पिसाके लिए पको 'हु' नामक एक मौलिक पुस्तक लिखी। १८७ ई में साधू नवलराम तथा मुन्गी उधाराम शिरचन्दानीने 'उसेकास नामक' पुस्तकका अंग्रेजीसे अनुवाद किया तथा मुन्गी उधारामने ईमप रूँ आलाख्यूँ नामक पुस्तक भी लिखी। १८६४ से १८७० तक बीबान केवलरामने दही मुन्दर भाषामें ग्रन्थ मुन्डिड़ी 'गुरुकर्म' और 'गुरु राफकर' नामक तीन मौलिक ग्रन्थ लिखे। १८७९ में मिर्जा कसीब बेगने Bacons Essay का मकामात अस हिकमत के नामसे अनुबाह किया।

१८८ से लेकर १९१४ तक जिन-जिन विद्वानोंने रचनाएँ कीं उनको भी हम भूल नहीं सकते। यह काल अनुवाद काल था। धिंकारपुरके भी रोजरदान बांजरदान सक्करक भी हरीमिह तथा हिरण्यवाद (सिन्ध) के भी विनोमल बसरमलने प्रकाशकोके रूपम कई पुस्तकें अनुवित करवाकर उपवाईं। उनमेंसे कुछ चुनी हुई पुस्तकें हातिमठाई बार बरबेय मुलबरावकी राजमल मसूक आदि हैं। इसक अलावा भी ठाकुरदास आमुशोमलने 'बम्भनाम्ना' तथा 'भूतनाम' का प्रकाशन करनेके लिए अपना प्रेस खोला। ये पुस्तकें पूर विकीं। बम्भनाम्ना और 'भूतनाम' एक साथ प्रकाशित न होकर कई भागोंम प्रकाशित हो रही थीं लोगोंमें इनका धैर्य नहीं था कि वे अपने ठक उन भागोंकी प्रतीक्षा करें। अतः कई लोगोंने इन उपस्थासोंका फूनेक लिए हिन्दी सीखना आरम्भ कर दिया। इसमें असुक्ति न होती कि इन्ही उपस्थासोंको फूनेके लिए कई निगिदवीने हिन्दी सीखी। लेकिन साहित्यकी दृष्टिसे इनका इतना मूल्य नहीं था।

प्रथम उरबान-काल (कौड़ोमल-कसीब बेग काल)

भी कौड़ोमल और मिर्जा कसीब बेगके साहित्य-सेवक परांपरा करनेसे ही साहित्यमें नव बैठना आई। आरम्भमें भी कौड़ोमल बम्भनमल (मिर्जा निवासी) ने मरवारकी ओरले पाम्प पुस्तकें लिखीं। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि भी कौड़ोमलकी बहू नमाजम प्रभावित थे। साधू नवलराम तथा साधू हीरानन्दजी (धानू हय) ने ही मिश्रम बहू नमाजकी नीव रखी और भी कौड़ोमलकी उनके अमिग मित्र थे। उन दिनों इन धानू हयने यूनिवर्स एकादमी नामक हाइस्कूलकी स्थापना की जिसमें बंगालके प्रसिद्ध बहू-नमाजी भी बहू बाग्यब-बन्ध्यापाध्याय (जो बारमें निदिधयन हो गए थे) प्रचारक तथा अध्यापक होकर

आए थे। इनकी प्रेरणासे ही श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरके बड़े भाई श्री सतीशचन्द्रजी ईशरामदासने सेवान्त बज होकर आए थे। उन्होंने वहाँ ब्रह्म-समाजका उद्घाटन मुहूर्त किया था। इनके बाद श्री केशवचन्द्र सेनके भतीजे श्री मन्दलाल सेन आए। ऐसे महानुभावोंकी प्रेरणासे ही सिन्धीके लेखक तैयार हुए।

श्री कौड़ोमसजीने लगभग १ पुस्तके लिखीं जिनमें कई तो अनूदित हैं। बाकी १०-१२ पुस्तक उनकी मौखिक रचनाएँ हैं। उनकी सबसे बड़ी सेवा है सिन्धी भाषाको साहित्यिक अभिव्यञ्जनाके अनुकूल बनाना। यद्यपि उनके पहले राजपि इयाराम पिडूमस (सेवान्त बज) तथा श्री केशवरायने इस विद्यामें प्रयत्न किए फिर भी सफलता श्री कौड़ोमसजी ही मिली। साधु नवलराय तथा साधु हीरानन्दके प्रभावके कारण श्री कौड़ोमसजी स्त्री विद्याके प्रेमी बन गए, अतः उन्होंने बाप मारी चरित्र तथा पद्मे ५७ लिखकर इस विद्यामें सर्वप्रथम स्तुत्य प्रयास किया।

यदि श्री कौड़ोमसजी विभिन्न स्थानोंसे बुद्धमुखी सिपिम लिखे हुए स्कोर्कोंको एकत्रित करके न छपवाते तो सामी नामसे प्रसिद्ध सामी चन्दनरायका काव्य न मालूम किस अन्धकारमय गर्तमें पड़ा रहता। श्री कौड़ोमसजीने बहिन बाबूजी तीन छोटी कहानियोंका बड़ी सरल और सुन्दर सिन्धीमें अनुबाद किया।

मिर्जा कसीब बेग

मिर्जा कसीब बेगजी गणना सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले साहित्यकारोंमें की जा सकती है। इन्होंने अपने जीवन-कालमें कम-से-कम दो सौ पुस्तके लिखीं। यद्यपि इनकी अधिकांश पुस्तकें अनुबाद ही हैं, फिर भी इनकी मौखिक रचनाएँ भी कम नहीं हैं। यदि इन्होंने 'स्वाइवाठ उमर बय्यामका' स्वाइयोंम ही अनुबाद किया तो मोरमुनिजी बबुली भी स्वाइयोंमें ही लिखीं। इन्हें काव्य-अवतमे प्रथम स्वाइकार होनेका सौख्य प्राप्त है। इन्होंने दो मौखिक उपन्यास दिलायाम (१८८८) तथा बीगत (१८९) लिखे। कुछ विद्वानोंका मत है कि ये उर्दूके अनुबाद हैं फिर भी इनका रस रूप और भाषा बिल्कुल सिन्धी ही सम्यता है।

उन दिनों अहमद खान बस्बाजीने मुलबकाबखी तथा नीतू निमावबुर्गो उर्दू उपन्यास (१८९ में) उर्दूसे अनूदित किए। आप्पूब मुस्तक बन्ताहने गुम्ह खम्हान और बाग आलिय नामक उपन्यास लिखे। मुहम्मद मिर्रीक मुमाकिरन मुमनाज हमसाज महकर बागू तथा मुलबचन पामक उपन्यास लिखे। बीबाग प्रीतमशाम हुकमन रायने अजीब भट नामक मौखिक उपन्यास लिखा।

श्री लालचन्द अमर बिलासजीने दूर मन्नीम था (१९०१) तथा 'बोबि जो बट' (१९ ४) नामक दो मौखिक उपन्यास लिखे। श्री भैरमल महारचन्द आइबाजीने आनन्द मुन्वरी तथा मोहिनी बाई दो मौखिक उपन्यास लिखे। हम बालका अन्तिम मौखिक उपन्यास डॉ गुरबकाजी डारा लिखित गूरबहाम है।

प्रारम्भिक कालके नाटक

नाटककारोंमें श्री मिर्जा कबीर बेगदा नाम सर्वप्रथम किया था मकका है। इन्होंने कई नाटक लिखे जिनमेंसे सैफा मजरी (१८८०) और खुरशीर नामक दो नाटक रङ्गमञ्चपर भी खस जा चुके हैं। इन्होंने १८९६ में राहुन्दा नाटकका भी अनुवाद किया। श्री कीशिमलने १८८८ में हर्षदेव रचित रत्नावली नामक नाटकका बड़ी सुन्दर और युष्माचरेदार भाषामें अनुवाद किया।

१८९४ में श्री जे मिश्र कासेज (करौली) के प्रिन्सिपल श्री जैरामन तथा गोरमी प्रोफेसर पाण्ठाके प्रयात्नेमि मिश्र कासेज अमेच्युअर क्वॉर्टरिक सोसाइटी की स्थापना हुई और मिश्रीका पहला रङ्गमञ्च स्थापित हुआ। इस रङ्गमञ्चपर ग्रेस्मने के लिए सन् १८९४ ई में श्री जेठामन्द खिलनदासने नरक समयस्ती नामक सर्वप्रथम नाटक लिखा।

इसके बाद इस रङ्गमञ्चपर खेल्नेके लिए बीबाब भीलागामिहने 'हरिदाम्ब' (१८९४) और होपही (१९०२) नामक दो नाटक लिखे जिनका कथानक महाभारतम लिया गया था। उन्होंने रामायण (१८९८) नामक नाटक लिखा जो जनताका बड़ा प्रिय मया। इनके अलावा मुर्जन राधा (१८९१) और 'मोहन वारिका' नामक दो मौलिक नाटक और लिखे।

इसके बाद इसी रङ्गमञ्चपर खेल्नेके लिए मिर्जा कबीर बेगने मस्सपिमर के कई नाटकोंका अनुवाद किया अतः उनके पात्रोंके नाम तथा स्वाम बदनपर उन्हें मिश्री रूप दे दिया गया। वे नाटक इन प्रकार हैं —

- (१) 'हुम्ता दिलवार' (१८९७) Merchant of Venice का अनुवाद
- (२) "गाह एलिया (१९००) King Lear का अनुवाद"
- (३) "फेरोह दिल् बडोरा (१९०२) लॉर्ड फ्लिटके उपन्यास 'Night and Morning' का नाटकीकरण
- (४) "समझाव मर जाना" (१९०८) Cymbeline का अनुवाद।
- (५) "बकीरु एं गरीक" (१९०९) Two Gentlemen of Verona का अनुवाद
- (६) "पुलजार ऐ गुलजार (१९०९) Romeo and Juliet का अनुवाद
- (७) "राहजाहा बलराम" (१९११) Hamlet का अनुवाद
- (८) "नेकी ए बनी" (१९११) एक उर्दू नाटकके अनुवाद

इसके अलावा श्री मेधमल महारथने रिय जॉन (King John) का तथा गेबागिट अजवाबीने गेरीडनक पिझरो (Pizzaro) नामक नाटकका सन् १९०२ ई में अनुवाद किया। इस प्रथम उन्पाद काफ़ी मौलिक नाटककार

भी खानन्द दर्शनी भी वे जिन्होंने 'रत्ना -श्रीशारी जुस' 'अमाने भी लहिर' तथा 'बुध जो धिक्का' नामक चार मौखिक नाटक लिखे। श्री सातचन्द अमर दिनोमलने सामाजिक बुराईयोंका विमर्शन करनेके लिए 'मधु धर्म' (१९९) तथा 'ऐण कौन बेण' नामक दो मौखिक एकांकी लिखे।

सिन्धी भाषाका साहित्यिक रूप

मैं पहले ही लिख चुका हूँ कि राजागि दयाराम गिहूमन तथा श्री कौड़ोमलने सिन्धी भाषाको साहित्यिक रूप देनेका प्रयत्न किया किन्तु इस विषयमें श्री मेहमन महरचन्द तथा उनसे भी बढ़कर श्री परमानन्द मेवारामने सिन्धी भाषाको सबस अधिक साहित्यिक अभिव्यञ्जनाके योग्य बनानेका सफल प्रयत्न किया। इन्होंने बह्म-बान्धव बन्धोपाध्यायके साथ ईसाई धर्म ग्रहण किया और उस धर्मके प्रचारके लिए 'जोति' नामक सिन्धी साप्ताहिक पत्रिका १८९९ में निकाली जो ४ वर्षों तक सिन्धी भाषाकी सेवा करती रही। ईसाई धर्मकी बातोंने अन्धाधुनिक कई अन्य विषयोंपर भी मुन्बर छेद छपते रहे, जिनकी भाषा बड़ी प्राक्कल और मानिष्ठ रहती थी। हात्स इसके कई छोटे-छोटे बुटबुके उसमें छपते थे। उन सब बुटबुकोका संग्रह कर १९१२ में दिक्कहार नामक पुस्तक (चार भागों) में प्रकाशित की गई। इसके अन्धाधुनिक मुन्बर निबन्ध 'जोति' में छपते उनका भी संकलन श्री परमानन्दजीने 'बुल फुल' नामक पुस्तक (दो भागों) में प्रकाशित किया।

सिन्धी भाषाकी सबसे बड़ी शक्ती तथा जो श्री परमानन्द मेवारामजीने की वह थी उनकी 'सिन्धी कोप' की शक्ति। इसके लिए उन्होंने अपने जीवनका बड़ा भाग अर्पित किया। सिन्धी भाषाका यदि कोई प्रामाणिक कोप है तब तो उनके रूपमें स्वीकार किया जाता है तो वह इन्हीका 'सिन्धी कोप' है। इन्होंने एक 'अहिंसी सिन्धी कोप' भी तैयार किया।

धार्मिक साहित्य

सिन्धी भाषामें धार्मिक-साहित्य भी काफी मात्रामें प्रकाशित हुआ है। नरौजीके श्री ठेजूराम धर्मकी सनातन धर्म पत्रिका की ओरसे श्रीमद्भगवद् गीता श्रीमद्भगवत् तुलसीकृत 'रामायण' आदि कई धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। उन्होंने कुछ सामाजिक उपन्यास भी प्रकाशित कराये।

सबसे पहले राजागि दयाराम गिहूमनने सिन्धीमें गीता तथा पातञ्जल योग दर्शनपर विस्तृतपूर्ण टीकाएँ लिखीं। मध्य साहित्यके अथ श्री साहब तथा गुरुमनी साहबपर भी टीकाएँ लिखीं। इससे अन्धाधुनिक मात बड़ी-बड़ी विस्मयें मन जा वह बूढ़ नामक पुस्तक लिखी जिसमें पौराणिक और पारंपारिक दर्शन-साधनोंपर बड़ी बारीकीसे विचार-विनिमय किया गया है।

हैदराबाद गुरु संपत्त की ओरस सिख धर्मके विद्वान् श्री फाहचन्द मेहराजने श्री 'गुरु' ग्रन्थ साहबका 'मुख्याची' नामक मासिक पत्रिकाके माध्यमसे ३० वर्षके अल्पक परिधमसे मिन्हीमे अनुबाद प्रकाशित किया। भारत-विभाजनके पहले बहु मशाय हो गया था अतः श्री फाहचन्दजी पुनवाणीने बम्बई गुरु मन्द द्वारा उनका पुनर्नवीकरण किया है।

तीसरे हे साधु बाम्बाणीजी जिन्होंने विभाजनके पहले ही भीमत्रयमण्ड्य पीठा तथा सन्तो और ग्रन्थ साहबकी बायीपर प्रचुर मात्राम साहित्य प्रकाशित किया था और विभाजनके बाद भी सन्त पीठा कासब पुनाही ओरसे इस कार्यको मुबारक हासे निभा रहे है।

चिन्तितरु मानकराम बजाणी द्वारा किया गया भीमत्रयमण्ड्य पीठा का पक्ष बड अनुबाद बड़ा हा गुरुर बन पड़ा है। ५ द्वाराका प्रवाद यदुर्वेदीन सोरमाम्ब निकनने पीठा रहस्य मुन्दर अनुबाद किया है।

मारंग यह कि मिन्ही भाषाम मुमलमानी तथा हिन्दू धार्मिक-साहित्य प्रचुर मात्रामे उपलब्ध है।

प्रथम जहान-काल (सिन्धी भाषाकी पत्र पत्रिकाएँ)

मिन्ही पत्र तथा पत्रिकाओं भी मिन्ही साहित्यकी अच्छी सेवा की है। सर्वप्रथम मन् १८८४ ई म मिन्नु मुबार नामक पत्र निकला। १८९ में साधु हीरानन्दने सरस्वती नामक मासिक पत्रिका निकालना गुरु की जिनमें धार्मिक सामाजिक चार्चिष तथा दलणिक विषयोपर मुन्दर निबन्ध छपने प। १८९१ में श्री सिकराम ठिलकचन्द बजाणीने प्रभात नामक साप्ताहिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। स्वयमग इन्ही दिनों करीबीसे मनानन धम पत्रिका (मासिक) प्रकाशित हुने लगी। १८९९ में श्री परमानन्द मदारामने आति नामक पत्रिका समाचार पत्र निकाला। १९१२ में पं लकराम नयनाराम धमले बेबनागरी लिपिमें मिन्नु भास्कर नामक मासिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। उन्ही दिनों श्री कुन्दनमल बीपचन्द त्रिबहामानीने आनन्द नामक धार्मिक पत्रिका निकाली। श्री लालाराम बाम्बाणीन माता नामक राष्ट्रीय पत्रिका निराली।

राष्ट्रीय साहित्य

इस कालमें सोरमाम्ब निकल द्वारा लिखित पुष्पिकाके अनुबादके अनिश्चित कोई साहित्य उपलब्ध नहीं है। बहु छोटी पुष्पिका थी। पुष्पके छपन ही अनुबादक पं मोहर्षेन शर्मा प्रकाशक श्री बेदुमलजी तथा रिक्टर श्री बीदमलजीका मिश्रणकर किया गया। पत्रिकायम्बरूप केवलको ६ पृष्ठ तथा दो अन्य मित्रोंको शर्मि तीन पृष्ठ कर कर बाराबारका दण्ड किया गया।

निबन्ध साहित्य

सिन्धीमें निबन्ध-साहित्य इतनी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध नहीं है फिर भी श्री श्रीकाराम प्रमदन् तथा श्री बयाराय वसन्तमल मीरचन्दानीने कई लेखकोंके निबन्ध एकत्रित कर सन् १९७ में मुम्बईमें नामक निबन्ध-संग्रह छपवाया।

इस कालके निबन्धकारोंमें निम्नलिखित विद्वानोंके नाम उल्लेखनीय हैं —

१-राजपि बयाराय २-श्री केवलराम सत्तामतराय ३-श्री मारायण जगन्नाथ चौध (महाराष्ट्र) ४-श्री उधाराम बाबरदास ५-साधु नवलराय ६-साधु हीरानन्द ७-श्री कौड़ोमल ८-मिर्जा कसीब बय ९-श्री परमानन्द मेकाराम १०-श्री निर्मलदास फडण्वण ११-श्री मेहमज महरचन्द आदि।

द्वितीय उत्थान-काल (जेठमल-कालचन्द युग) सन् १९१४-१९४७

द्वितीय उत्थान-काल सिन्धी साहित्यके लिए उत्साहपूर्ण काल माना जाता है। सन् १९१४ ई में सिन्धी साहित्य सोसाइटीकी नींव रखी गई। श्री जेठमल परमराम गुलजानी तथा श्री कालचन्द बमर विनोदमल जगत्याजी इसके मुख्य कार्यकर्त्ता थे। इस सोसाइटीकी ओरसे प्रति माह एक-न-एक सुन्दर पुस्तक छपती थी।

राजपि बयारामके सुपुत्र श्री केवलरामजीने एक बड़ी रकम सिन्धी सायबेरी नामक संस्थाको एक ही सुन्दर और अन्य उत्तम पुस्तकोंके लिए प्रदान की। श्री जेठमलजी इस संस्थाकी आत्मा थे। श्री जेठमलजीका जन्म १८८९ में ईश्वरदासमें हुआ था। यद्यपि इन्होंने मैट्रिक तक ही अध्ययन किया था फिर भी वे प्रोफेसर बन गए। इन्होंने सिन्धी-साहित्यकी अनुपम सेवा की। सिन्धी सायबेरीकी ओरसे एक ही पुस्तकें प्रसिद्ध करनेका मकसद इन्होंने पूरा किया। वे जैसे अनुपम लेखक थे वैसे ही अनोखे व्याख्याता भी थे। वे दियॉर्माफिन् थे। डॉ एनीबसन्के समयमें इन्होंने अनेक व्याख्यानो तथा भाष्यवासी नामक पत्रिका द्वारा सारे सिन्धमें एक नए उत्साहकी लहर फैला दी। आप हिन्दीके भी अच्छे जानकार थे। मुरदासके कृष्ण सम्बन्धी पद्योंमें इनकी बड़ा प्रेम था। वे दिन भूखाय नहीं जा सकते जब बियासोधिकल काजमें कृष्ण परक पक्ष गवा-गवाकर उनकी सुन्दर व्याख्या करने थे। लोकमपियरके दो उपन्यासोंका ईमकेट और लुक्कन के नामसे अनुबाद किया। आपने जर्मनीके विज्ञान मंडीके फाइनल का अनुबाद भी किया। इसके मसाला आपने कई धार्मिक पुस्तकें भी लिखी जिनमें मौनु आह्वै कोम माय जाती ऐ कर्म मौनु हिन्दु बहानो कर्म जा नेमु पुरुष जोनी अप जी साइबर टीरा आदि मुख्य हैं। आपने हमारे भी कई ग्रन्थ लिखे। आपकी माया प्राग्जल तथा बड़ी ओजस्विनी थी। विभाजनके बाद १९४८ में आपका देहान्त बम्बईमें हुआ।

साछचन्द अमर विनोमस

श्री सासचन्दरी भी इस कालके मुख्य ग्दम्भ माने जाते हैं। आपका जन्म २१ जनवरी १८८१ में हैदराबादमें हुआ था। आपकी साहित्यसे बड़ा प्रेम था। आप आजीवन साहित्यकी साधनामें लगे रहे। श्री जेठमल्लकी साधी बनकर आपने सिन्धी साहित्य सोसायटी और मिथी कॉलेजी के लिए कुछ पुस्तकें लिखकर उनका ह्रास बनाया। आपने उपन्यास नाटक कहानियाँ निबन्ध तथा समालोचनात्मक पुस्तकें लिखीं। १९२१ में रबीन्द्रनाथ ठाकुर सासायटीका बन्य हुआ। साहित्य प्रकाशनके साधनाय रवि बाबूके नामपर रंगमञ्चका भी जायाजन हुआ। इस रंगमञ्चपर खेलनेके लिए इन्होंने उमर माई नामक नाटक लिखा जो बड़ी सफलता पूर्वक खेला गया। सिन्ध विभाजनके बाद आप बम्बई आए। यहाँपर भी इनकी साहित्य साधना चलती रही। आजीवन अध्यापनका कार्य करते रहे। बम्बईमें भी हाइस्कूल फ़र सिन्धीज तथा कर्बूनिबसिटी के लिए परीक्षाओं तैयार करते रहे। सन् १९२२ में गाँधीजीके आन्दोलनके समय जामा जेसमे रहकर भी इन्होंने कई पुस्तकें लिखीं। इनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली था। १९ वर्षकी अवस्थामें आपका सन् १९१४ ई में बम्बईमें स्वर्गवास हुआ।

रचनाएँ — निम्नके १-गाह २-सचक ३-गुरु इन तीन कवियों पर आपने समालोचनात्मक निबन्ध लिखे। इन निबन्धोंके अलावा विभिन्न विषयोंपर भी आपने कई निबन्ध लिखे हैं।

अन्य रचनाएँ — १-बोमि जो बई २-मरा मुसाबु, ३-मच ता सहिके ४-मोन बर्न दिम्पू ५-किचिनी अ जो कट्ट, ६-फ़कनि मुठि ७-बूगो ८-दुखनि हरी बित्थगी ९-ठुर मचीज था १०-रामु बाविगाहु ११-मेम जो बरु, १२-साहागो घातु १३-दुवरन मुहम्मद रसूल १४-मचमु मूंगरो १५-मुमाफ़िरी अ जो मचो १६-मातमिपुनि ले दिक्दारी।

नटक — १-उमर माई, २-कुहिणी मेगाव ३-मेमकी बेज ४-नकतु घर्मु।

अन्य ग्रन्थ — १-गुरु कैदीरी २-हिन्दू नार्पुनि मा बीस ३-कम्बारावरी ४-साइराना मुल ५-मागिक भेरी काक माहि तथा अन्य कई ग्रन्थ लिखे। उनमेंसे अभी कुछ अप्रकाशित हैं।

इस कालके अन्य लेखक

डॉ हीतचन्द मुलचन्द पुरबकसोंजी (जन्म १८८३ मृत्यु १९४६) ये डॉ जे मिश्र जालेजके प्रिन्सिपल थे। आपने कॉलेजों तथा यूनिवर्सिटीकी परीक्षाओंके लिए मिथी भाषाको स्पष्ट दिखाया। आपने ८ जिस्थोमे गाह् अरुण्ड स्वीफ़ पर टीका-ग्रन्थ लिखे।

मेकमल महारण्य (जन्म १८७५, मृत्यु १९१५) यद्यपि इनका वर्णन पहले हो चुका है फिर भी इस उत्थान-कालमें आपने भी कई पुस्तकें लिखीं जिनमेंसे मुख्य है सिन्धी बोलीम की तारीख अन्कल टॉम्स केबिन (Uncle Tom's Cabin) का गोलनि वा मून्डर नामसे संक्षिप्त अनुबाध तथा सिन्धु जो सेलानी ।

मुहम्मद सिद्दीक मैमथु आप ट्रेनिंग कालके प्रिन्सिपल थे । आपकी रचनाएँ इस प्रकार हैं — १-तारीख ताहिरीम की इन्त खाम् २-मज्मून मबीसी ३-हुदातीज जो शौह ४-सिन्धीम की अरबी तारीफ़ (केवल पद्य) ।

आचार्य गिरवाणी (जन्म १८९, मृत्यु १९१५) आपका पूरा नाम है जामुदोमल टेकचन्द गिरवाणी । ये आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटीसे एम ए हुए थे । इम्पियल एज्युकेशनल सर्विसेस इकाहबादके सरकारी कार्मिकके कई वर्षोंतक प्रोफेसर रहे । उसके बाद गाँधीजीके १९२१ वाले आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण जेल भी गए तथा महमदाबादके राष्ट्रीय कॉलेजके प्रिन्सिपल होनेके कारण आचार्यके नामसे प्रसिद्ध हुए ।

श्री गिरवाणीजीने अन्य पुस्तकके अलावा कालियासरे रघुवच 'मातृविक्रान्तिमित्र' तथा विष्णुमोक्षदीका सिन्धीमें संक्षिप्त अनुबाध प्रस्तुत किया और एक भाषा नामक पुस्तक लिखी । इन पुस्तकेंके अतिरिक्त इन्होंने कुछ निबन्ध भी लिखे हैं ।

प्रोफेसर नारायणदास रतनमल मल्लाणी एम ए उत्तीर्ण करनेके बाद आचार्य कृपालानीके छात्री आप मुजफ्फरपुर काछेज (बिहार) में कई वर्षों तक प्रोफेसर रहे । सन् १९२१ ई में लौकरी छोड़कर आप गाँधीजीके आन्दोलनमें शामिल हुए और कई बार जेल हो आए । गाँधीजीकी आज्ञानुसार १९३१ में सिन्धमें आप रचनात्मक कार्यके लिए भीठ आए । वर्षों तक आप सिन्ध राष्ट्रीय प्रचार समितिके अध्यक्ष रहे । आपकी भाषा बड़ी ही प्राग्ज्वल और मँची हुई है । यदि आपको ग्रामीण भाषाका विशेष ज्ञाना रहे तो उत्पत्ति न होगी । आजकल आप राज्य-मन्त्री (एम पी) के सदस्य हैं तथा भारत सेवक समाजके मुख्य स्तम्भ माने जाते हैं ।

रचनाएँ — अनुवित प्रश्न — १ द्विद स्वराज्य २ महात्मा गाँधीम की आरम्भ कहानी ३ अबाधिर जीवनी ।

मौखिक — गीठाणी बहिर में ग्रामीण भाषामें आपने ग्रामीणोंका दिग्दर्शन बड़ी ही मौजस्सिनी भाषामें किया है । अन्धोंके लिए — बारजू बोम्पू बन्नीर जो सैह अन्धारबाना तथा गुजरान ।

वास-साहित्य

दयाराम बसन्तमल मीरदग्गाणी (जन्म मार्च १८८०) ये ३२ वर्षों तक मरवाही शिक्षा-विभागके अध्यापक रह । आपने कराँचीके प्रसिद्ध नारायण

बपमात्र सरकारी हाइस्कूलके मुख्याध्यापक पहले अवकाश ग्रहण किया। आप मिश्री भापाको रचनागरी लिपिमें लिखनेके समर्थक हैं।

रचनाएँ — सिन्धी ग्रामक अमी हिसाब तथा बूँड़ सिन्धी नमूद।
सोमराज निर्मलदास (जन्म-काल सन् १८८१ ई.) ये हिन्दी और फारसीके अच्छे विद्वान हैं। इनके लेख 'मिथु' 'गृध्र समीप' तथा 'वात्सेय मन्त्रजन' में खूब छपते थे। इनकी क्याली अलफा नामक पद्यबद्ध पुस्तक प्रकाशित हुई थी।

सर्वाराम उमाराज पल्लवाणी (जन्म १८९१) भारत विभाजनसे वर्षों पहले वे भागमें विभिन्न स्थानोंमें प्रोफेसर रह चुके हैं। आजकल जय-हिन्द कागज बम्बईमें प्रोफेसर हैं। सिन्धके बाहर रहकर भी इन्होंने सिन्धी साहित्यकी अच्छी सेवा की है। आप मिन्धीक प्रसिद्ध एकांकीकार हैं। आजकल आलोचनात्मक साहित्य प्रकाशित करनेमें विशेष रसि रखते हैं। इन्होंने भी रसि बाबूकी 'वीराम्बर' का गद्यमें सुन्दर अनुवाद किया है।

इस कामसे छुटकर लेखक

१. बामुल्ल मूलचन्द

रचनाएँ — गामी अ जा ससोक पर टीका कृप्य माना।

२. नानकराम धर्मदास बीरबम्बानी

रचनाएँ — मेघदूतका पद्य-बद्ध अनुवाद तथा छोटे-छोटे नाटक।

३. तीर्थ बल्लभ

रचनाएँ — रसि बाबूकी चित्रा का सुन्दर भाषामें अनुवाद।

चिपि धू निबन्ध-ग्रन्थ (सिन्ध सरकार द्वारा प्रकाशित)।

जवाहिर जीवनी ५ जवाहरलालजीकी आत्म-कथाका अनुवाद।

४. बीपबन्ध तिलोकचन्द

५. लोलाराम ठाकुरदास माखीजाजी इन्होंने कई नाटक लिखे हैं।

६. देवदत्त कुम्हारदास धर्मा आनन्द मन्का अनुवाद सरदार बल्लभ भाई पन्नेछकी संक्षिप्त जीवनी तथा वाक-साहित्यपर कई लेख। बारिन हेल्मिन्ग्ज का वारनामा तथा छत्र कहानियाँ।

७. पं. द्वारका प्रसाद यजुर्वेदी उपमास (तीन भाग) लोकमान्य निकरकी गीता तथा कई अन्य पुस्तकें।

कहानी साहित्य

श्री मालचन्दने हुए मरीम जा ऐं किसिनीम जा कष्ट मित्रकर सिन्धी कहानीका आरम्भ किया। कौटन सँवने रचनागरी लिपिमें असाठ लेखक द्वारा लिखी हुई आठगामी राह दिशाच भी सबसे पहल प्रकाशित कइई थी।

श्री मेष्मन्क महारचन्दने प्रेम आ मरानम् तथा श्री निर्मलदास कनहचन्दने सरोजिनी नामक कहानी लिखी।

इस कासके प्रमुख कहानीकार यों हैं

१ आसानन्द मामतोरा— फौजमुख

२ समदमन भावनाधी— बीरी ऐ पवित्र प्रेम

३ नानकराम धर्मदास— धर्मदास जी बही जीवति जो जसु

उसी समय हैदराबादसे श्री मेकाराम वास्वाजीने सुन्दर साहित्य नामक मासिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। इसमें भारतके प्रसिद्ध कहानीकारोंकी कहानियाँ अनुविष्ट होने लगीं जिनमें मुख्य कहानीकार रवि बाबू रणजीर सुहृद्यं तथा मुन्शी प्रेमचन्दजी थे जो सिन्धी पाठकोंके लिए विशेष लोकप्रिय बन गए। १९३१ में श्री बलचन्द राजपाणने सिन्धु नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित करनी आरम्भ की। इसी वर्षमें यही एक पत्रिका थी जिसका साहित्यिक मूल्यांकन किया जा सकता है। अन्य सिन्धी साध इसमें कहानियाँ भी छपने लगीं जिनमें कई मौलिक थीं। इनके मुख्य लेखक थे—सर्वधी अल्लु अस्ता बहबी मिर्जा नादिर बेग धर्मदास मीरबन्धानी तथा आसानन्द मामतोरा। इसके अलावा १— रत्न २— कहानी ३— आसा ४— भारत जीवन साहित्य मन्थन नामक पत्रिकाएँ भी बहू कहानियाँ प्रकाशित करने लगीं।

सायेंत यह कि सन् १९२२ से लेकर १९४५ तक सिन्धीमें सैकड़ों कहानियाँ अनुविष्ट हुईं। इस बीच कई मौलिक कहानियाँ पुस्तक रूपमें भी प्रकाशित हुईं। यहाँ स्वानामावसे लेखकोंके नामोंका ही उल्लेख किया जाता है —

लेखक

रचना

१—श्री जैठमन परसराम	बमिहा पोत जू बाबाभ्यू
२—श्री प्रमोदास	अन्दर न ज उधिया
३—श्री उत्तमान अली अनसारी	पंच
४—श्री आसानन्द मामतोरा	जीवति-प्रेम ऐ पाप जू कहाभ्यू
५—मिर्जा नादिर बेग	मिस इस्तमबी ऐ मोहिनी
६—श्री गोविन्द पञ्जाबी	सर्दू जहाँ रैगिस्तानी फूज
७—श्री बिहारी छाविकपा	मिठी कहाभ्यू
८—श्री कैजू तुब्बिस्याधी	मन्जरी कोस्तिहिन
९—श्री भवन पञ्जाबी	मेघ
१०—श्री कीरगु बाबाधी	हूध
११—श्री लठिमन राजपाण	नमो जमानो
१२—श्री आनन्द मोलाधी	इमाम
१३—श्री कीरगु नरियाधी	इबू न लाइ
१४—श्री अयाज	रोम विजिषी
१५—श्री हज महारयाधी	धीमो बरी

निबन्ध

इस कालमें आ निबन्धकार हुए, उनमेंसे कइयोंके नाम तो आ चुके हैं सचिन कुछ ऐसे लखक रह गए हैं जिनका विशेष रूपसे उल्लेख होना चाहिए। इनके नाम इस प्रकार हैं —

१—प्रोफसर साकसिंह अग्रवाणी २—श्री फनद्वन्द्व बाग्यामी ३—
श्री मेखाराम (बड़ीब) ४—श्री मोहिन्दराम भाट्टा आदि।

बास-साहित्य

इस कालमें बास-साहित्य भी पर्याप्त मात्रामें प्रकाशित हुआ। श्री मेखाराम बाग्यामीने 'गुरु फुल' नामक मासिक पुस्तिका द्वारा श्रीमती बसन्ता हीरानन्द तथा बासकनि जी बारी द्वारा निकलनेवाली मासिक-पत्रिकाने इस क्षेत्रमें कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ प्रकाशित की हैं।

राष्ट्रीय साहित्य

इस कालमें विभिन्न संस्थाओं द्वारा रचित पुस्तकोंके अलावा ईशरवाद के कौमी साहित्य मण्डलने जिनके संचालक श्री बेरमल जयलयाणी से कई दशमक्योंकी श्रीमतीजी छपवाई तथा उस समय तक लिख हुए विभिन्न कवियों द्वारा रचित राष्ट्रीय गीतोंकी संकलित कर छपवाया। इनके अलावा श्री प्रभुलाल ब्रह्मचारी तथा श्री दीपचन्दने भी कुछ पुस्तकें नवजीवन साहित्य मण्डल द्वारा प्रकाशित की।

धार्मिक साहित्य

इस कालमें धार्मिक-साहित्यका भी प्रचुर मात्रामें प्रकाशन हुआ। अन्य धार्मिक पुस्तकोंके अलावा स्वामी विश्वरानन्द तथा स्वामी रामतीर्थजी कुछ पुस्तकोंका भी अनुवाद हुआ। इस क्षेत्रके मुख्य लखक हैं—श्रीबाल चन्दराम आदवाणी श्री टंकलराम आभूषणलाल बलील श्री अठमल परमराम पं तनूराम मर्मा पं डारका प्रसाद शर्मा श्री फनद्वन्द्व मेखाराम आदि। इनके अलावा निम्नलिखित प्रकाशन मण्डल इनके भिन्न प्रकाशित हैं — १ श्री बहनराह दुष्ट, २ बह्म विद्या माला ३ मनानन्द धर्म समा ४ गुरु मंगल ५ बह्मो ममाज ६ आय ममाज ७ विपरी-
मोदीयल सामाग्री आदि-आदि।

द्वितीय उत्थान-काव्यके कवि

मिर्जा कलीच बेगवा वर्णन मैंने साह सतीक बायी पुस्तिकामें कर ही दिया है। श्री विमलचन्द 'बेबमि' का वर्णन आपक सामने प्रस्तुत ही है। इस कालमें दोष कवियोंका अक्षेपमें वर्णन इस प्रकार है —

इन पत्रिकाओंमें अनूदित कहानियों और भारतीय साहित्यिक उपन्यासोंके बजाया मौलिक कहानियाँ उपन्यास तथा विविध विषयोंपर निबन्ध प्रकाशित होने लगे। इंदर बजमेर, दिल्ली जयपुर, अहमदाबाद आदि कई स्थानोंमें भी साहित्यिक प्रगति और एकजुटने लगी और जब तो यह कहते हुए गर्व होता है कि सिन्धीके साहित्यकार समयको देखकर सतक और जागबक हो गए हैं। बिना साहित्य सिन्धमें निमित्त हो चुका था उस सीमा तक पहुँचानेमें कोई कोर-कसर नहीं रखी गई है।

कहानी साहित्य

भारतमें आजके बाद सिन्धी भाषामें प्रचुर मात्रामें कहानियाँ लिखी गई हैं। अनूदित कहानियोंके बजाया भी २०-३०० मौलिक कहानियाँ उपलब्ध हैं। यहाँ अनूदित कहानियोंका वर्णन न करते हुए, मौलिक कहानीकारोंकी तालिका मात्र ही दी जा रही है।

इस कालके मौलिक कहानीकार इस प्रकार हैं —

सर्वेस्त्री—आनन्द बोलानी सुयुनु बाहूबा पोस्टी हीरामन्दाकी कीरु बाबाकी जगतु आदिबाबी आनानन्द मामठोर जमरनाक हिक्कीरानी लक्ष्मण राजभाक गीबिन्द मारही ठाण मीरबन्दाकी सुन्दरी उत्तम चन्दाकी मोती प्रभाष कृष्ण राही ईस्वर आचलु किमोठ पड़वा उत्तम बेतनु भाबीबासा दासु ठाकिनु शुभ आसिनाणी मुरसी मुषी भापयण पत्राणी आत्माराम कालबाबी फजनु पुरमबाबी भापयनु चारही बला प्रकाश मोहन कम्पना किशिन खटबाबी मनोहर काल राम पत्रबाबी लोकनाथ जेटक हरीकण्ठ आदि सिन्धी साहित्यके मौलिक कहानीकारोंके रूपमें प्रसिद्ध हैं।

आजकी सिन्धीकी कहानी अपना साहित्यिक रूप समीचीनता और सुन्दरतासे ग्रहण कर रही है। ज्योंकि अनुवच भाषा भी बलवी जा रही है। आजका कहानीकार भाव तथा बला पक्षमें सामञ्जस्य करनेमें सतर्क है। कई नए कहानीकार जो बिभाजनके बाद हिन्दीकी नींवमें पड़े हैं और अपने पुराने कहानीकारोंके चरण चिह्नोंपर चलकर हिन्दी पाठकोंसे साव फारसी पाठ भी ग्रहण करते हैं उनकी भाषा कुछ कमजोर रह जाती है। उधर फारसी तथा अरबी पाठोंके प्रयोग करनेकी लहलही बल पड़ी है और पुण्या साहित्यकार ऐस ही कहानीकारोंकी बार देता है जिससे फारसीसे अन भव भए लेखक महम-महमकर इस खेबम पक्षार्थ करनेवा साहस करते हैं। य- प्रमत्तनाकी बात है कि आज इन क्षेत्रमें बहनें भी उत्तर आई हैं इतना ही नहीं बही-बही पनि-यालिने भी साहित्य-सृजनमें अपना योग दिया है। सिन्धीकी कहानी भी जीवनके निकटतर आ रही है। लेखक विविध विषयोंपर लेखनी उठ रहे हैं। सामाजिक राजनीतिक अन्तर्राष्ट्रीय सबे-प-पक्ष प्रगतिवाद आदि अनेक विषयोंपर सुन्दर रचनाएँ हो रही हैं। सिन्धमें भारतमें अनेक बार कीमती बचवा

अन्य स्थानों पर मिन्की लोग जिन कठोरे मुजर हूँ अबका अपनी मिन्की म्पुनिमें जिन मन्त्रकेने कहानियाँ लिखी हैं, उनमें १—गामिहो २—सिन्मुईअ वा गल गोत्र बमनि ३—मिम्भू आदि कहानियाँके ललक भी आनन्द गीताकी प्रधान हैं।

अन्य मुख्य कहानीकार और उनकी कहानियोंकी सूची इस प्रकार है —
 कोरल बाबाणी—१ लूँ पुछी को छ मा उरामु छा भाहो २ लुची
 ३ पठा वा बुन ४ बम्बई आमची ५ बर्न जो दित्तिमें ममाहरी न मम्पो ६ हुन
 ७ जिनबीअ जो बाव ८ लए जग वा बसाबाव ९ महमद रामु मादि।

मोसिम बाबूही—१ अर्पिने कइनु २ बागिक वा जनाजो वा ३ पाप
 जो बड़ो ४ नानाजी मजिन्म ५ दित्त जी दुम्पा आदि।

लोकनाथ खेटले—१ मामजी हुज २ फरद मल ३ अडिबगु
 ४ माड़ी कुईबद ५ तीर्थयात्रा।

नारायण भारती—१ बन्म २ दम्पावज बरी गल न जयि जवे।
 कुछ ऐम भी बम्पनि है जो हम खेवमें मिस-बुलकर आगे बड़ रह है
 उनमेंसे मुख्य दम प्रकार हैं —

मुम्बरी उत्तमकथाकी और उनके पति को उत्तम—१ मिन्पूअ वा म्पु,
 २ ममता ३ मुकान का पोइ ४ मयी मुंजे म्कू टहिराए ५ ६ कौमान
 ७ बगनु ८ कामीरी सारी ९ पाइव हु म आदि।

मो उत्तम—१ जीवन मापी २ बन्म जी बलिहारी ३ बाकबाळट।
 कला प्रकाश—१ बैव २ अमी जिरह जाह ३ सरह वा पुन

४ मिप्पन अमाजे नीनेमें आइ ५ नाइवा आदि।

तारा मीरबन्वाकी—१ ओमु ऐं होनु, २ बीवार, ३ पर हुन आया
 ४ मन्त्राव।

पोपटो होरागन्वाचं—रबीन अमाने जू पमपीन कहाम्पू।

रामु पंजबाकी—साहू जू कहाम्पू।

बैतनु माड़ीबाता—मिन्की जीवन कहाम्पू।

नाटक

भारतमें आज मिन्की नाट्यकारोंने नाटककी बात बम ध्यान दिया है।
 न केवल मौलिक नाटक ही बम लिखे हैं बल्कि अनुवाद भी बम ही लिखे हैं। श्री
 यू एम मम्बानी आ लकाबीवार हैं उन्होंने भी हम और बम ध्यान दिया है। यहाँ
 मौलिक नाटककारोंके नाम तथा रचनाओंकी सूची प्रस्तुत की जाती है —

राम बंजबाणी—मिन्नु वा मल नाटिक और पूम्ब बाटी।

बात तालिब—मुमी वा नमद और निदटी ऐं मेदो।

बैतन मुम्बराणी—दम्पाक।

कृष्ण गहरी— माता ।

किशोर पट्टा— रीतु कहियो ।

बुद्धिबन्धु प्रभुवास— जीवन ऐ कसा ।

रोपटी हीरागणेशजी— सामोरा परियायु ।

उपन्यास

विमाननके बाद भारतमें जानेपर कहानीकी तरह उपन्यासोंका भी अनुवाद आरम्भ हो गया । श्री जगत आदवाणीने अपनी "कहानी भासिए पत्रिकाका नाम बदलकर कहानी नाबिक माता" रखा और प्रतिवर्ष छह मुहर अनूदित उपन्यास प्रकाशित होने लगे ।

उपन्यासोंके लिए विमललिखित प्रकाशन गृहाने बड़ी लगनके साथ काम किया —

विहारी छावियनि— सत्यम साहित्य माता " ।

जैठानन्द लालबाणीने हृदयवाचसे निकलनेवाली "भारत जीवन माता" का पुनर्मुद्रण शुरू किया ।

इस विधामें "हिन्दुस्तान किताब घर" वालोंने सबसे बड़ा योग दिया ।

इसके अलावा पूना जजमेर, जयपुर तथा दिल्ली आदिमें भी कुछ प्रकाशन गृह स्थापित हुए हैं जो इस विधामें बड़ी सतर्कतासे काम कर रहे हैं ।

यहां मैं अनूदित पुस्तकोंका वर्णन कर मौलिक रत्नोंके बारेमें ही लिखूंगा । अनूदित उपन्यासोंके बारेमें इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि भारतके मुख्य-मुख्य उपन्यासकारों—रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सरस्वत्प्रसाद मुन्शी प्रेमचन्द आदिके अलावके उपन्यास तथा कस इमलीअ और फाग्वीसी उपन्यासकारोंकी मुख्य मुख्य रचनाएँ सिन्धी भाषामें अनूदित हो चुकी हैं । अब विभिन्न प्रान्तोंमें जाकर बसनेवाले सिन्धी लेखकोंने उन प्रान्तोंकी विशेष रचनाओंकी ओर भी ध्यान दिया है और धीरे-धीरे उन रचनाका अनुवाद हो रहा है ।

भारतमें जानेके बाद कुमारौ ठाकुर मीनचन्दाणीने कृपायक ककी नामक पहला मौलिक उपन्यास लिखा ।

१९४२ से ही मौलिक उपन्यासोंका दौर आरम्भ हुआ गया । श्री मोहित मास्ती जो पहले बाहरीकार थे वे अब उपन्यासकार बन गए और आज छेठ उपन्यासकारोंकी कीर्तिमें आपकी जगह होती है । श्री मोहित मास्तीके कुछ उपन्यास हिन्दीमें भी अनूदित हो चुके हैं । इस वर्ष ही इन्होंने १—'मानू' २—'त्रिदशम' जे राहु ने और ३—'जीवन नाबी' नामक तीन उपन्यास लिखे हैं ।

इसी वर्ष श्री राम पत्रवाणीने त्रिपती या मीनू नामक उपन्यास लिखा है ।

१९२३ में श्री गोविन्द मास्तीने मल जो मीनु तथा पत्नी बड़ा बरत
वा बिष्कुटिया नामक वा उपन्यास लिखे।

मुन्तरी उत्तमचम्पायीका किरण्ड बर्षा नामक पञ्चा उपन्यास
लिखता था। -

इस उपन्यासके कारण श्रीमती मुन्तरी उत्तमचम्पायीने उपन्यास-व्रतमें
जपना पड़लपुर्बे स्थान बना लिया है और यह कहनेमें कोई सम्पुष्ट न होगी कि
मुन्तरी आर भाया और कथा आविर्ग विचारय इस क्षेत्रमें अनुपम है। यद्यपि
श्री गोविन्द मास्ती सेष्ठतम उपन्यासकार है किन्तु श्री मुन्तरीका स्थान अविष्ट ही है।
इसका प्रमाण यह है कि वेद बपके अन्दर इस उपन्यासके दो संस्करण निकल चुके हैं।
इस वर्षका अन्तिम उपन्यास श्री शिखी रामबायी द्वारा लिखित गुमान वा जिन
“भारत जीवन” नाम्ने प्रकाशित किया।

१९५५ में पूर ० मौक्तिक उपन्यास निकल। श्वानामावने यहां
वेबल उपन्यासकारके नाम तथा रचनाओंकी सूची ही प्रस्तुत की जाती है —

संख्या	उपन्यास	प्रकाशन मूह
१	गोविन्द मास्ती	छात्राव
२	गोविन्द मास्ती	चक्र निपाह
३	मोती प्रकाश	अन्धारा उन्माद
४	मानन्द बाबायी	मनु
५	शानु ठाकुर	बीर
६	मोहन कल्याण	कर्म
७	मोहन कल्याण	बाबाय
८	चन्द्रकाश अमरिहायी	मौखी घाटी
		भारत मूह

इसका अन्तर्गत “वीरज साहित्य माला” तथा “प्रमाण साहित्य माला”
द्वारा प्रकाशित व चिन्ता और भावन कल्याण द्वारा रचित “रति बायी आह”
और शिखी नामक दो मौक्तिक उपन्यास निकल चुके हैं।

प्रकाशन मूहोंके अन्तर्गत कई साप्ताहिक और मौक्तिक पत्रिकाओंमें यह
ही मुद्रा निरगत छाने हैं यदि उनका संकलन किया जाए तो कई निरन्तर ग्रन्थ तैयार
हो सकत है। ऐसी पत्रिकाओंमें “हिन्दुवायी” साप्ताहिक मुख्य है। इनकी
१२००० प्रतियां छाने हैं। नई दुनिया नामक एक और साप्ताहिक है।

लोक गीत

लोक-गीतके संग्रह करनेमें श्री नागवध धारती मुख्य प्रयत्न कर रहे
हैं। उनके लोक-गीत सभी पत्र-पत्रिकाओंमें ही छप रहे हैं, पुस्तक-रूपमें अभी
छप नहीं छप सके हैं।

फुटकर-साहित्य

बम्बईसि निकलनेवाले हिन्दुस्तान दैनिक पत्रके दृष्टियों की ओरसे हिन्दुस्तान साहित्य माळा का पाँच-छह वर्षोंसे प्रकाशन हो रहा है। इस माळाके द्वारा विभिन्न विषयोंपर सुन्दर पुस्तकें छप रही हैं।

अजमेरकी 'सिन्ध पब्लिशिंग सोसाइटी' तथा 'मुम्बई साहित्य' वालोंने सरकार द्वारा प्राप्त सहायतासे एक नई योजना तैयार की है, जिसके द्वारा जरूरी सिन्धी तथा देवनागरी लिपिमें दीप ही पुस्तकें छपकर प्रकाशित होंगी। सबसे मुख्य प्रकाशन है हिन्दी-अंग्रेजी-सिन्धी कोष (देवनागरी लिपिमें) इसके सम्पादक हैं सर्वधी दीपचन्दकी देवदत्तजी तथा प्रभुदासजी ब्रह्मचारी। यह कोष दीप ही प्रकाशित होकर जनताके सामने आनवाला है।

बाक-साहित्य

भारतके विभिन्न स्वानोंसे बाक-साहित्य प्रकाशित हो रहा है। श्री गोबिंद महबूबानी "भारती" को आत्सू नामक सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित संगीत बन्धपर १००) रुपयेका सरकार द्वारा पुरस्कार मिला चुका है। श्री फ़तहचन्द वास्वाणीको भी भारत दर्शन पर १०) रुपयेका पुरस्कार सरकार द्वारा मिला चुका है। इसके अलावा यी दोनों क्वालीने बच्चोंके लिए बड़े ही सुन्दर पीठ लिखे हैं। अजमेरकी बासकमिनी वाली से मुल्काही नामक मासिक पत्रिका देवनागरी लिपिमें प्रकाशित होती है।

देवनागरी लिपिमें सिन्धी पुस्तकें

अजमेरकी "सिन्ध पब्लिशिंग सोसाइटी" द्वारा विभिन्न क्वालीके लिए विभिन्न विषयोंपर पाठ्य पुस्तकें छप चुकी हैं। "भारत दर्शन" का देवनागरीमें लिखित संस्करण छप रहा है। बम्बईकी "हिन्दुस्तान साहित्य माळा" तथा बार स्विथ "कमका हाईस्कूल" द्वारा कई पुस्तकें छप चुकी हैं। सबसे बड़ी प्रसन्नताकी बात यह है कि दिल्ली यूनीवर्सिटी की ओरसे आठ पुस्तकें देवनागरी लिपिमें छप रही हैं।

यह हमारे साहित्यकारोंके लिए बड़े गर्वकी बात है कि उनके कुछ बन्धोंका अनुवाद हिन्दी गूजरानी मराठी तथा अंग्रेजीमें भी हो चुका है। उनमें मुख्य बन्धकार हैं —सर्वधी मुन्वरी उत्तमचन्दाजी उत्तम कौरानु बाबाजी गोविन्द मासही गोविन्द पन्नाजी मुन्गू आहुजा तथा मोहम्मद "भारती"। इनके अलावा एच-ओ लेखकोंके ग्रन्थ पार्किन्सटान वालोंने उर्दूमें भी प्रकाशित कराये हैं।

भारत सरकारका सहयोग

कई विद्वानोंकी पुस्तकें भारत सरकार मैसनर बुक ट्रस्ट तथा अकादमी द्वारा प्रकाशित तथा पुरस्कृत हो चुकी हैं। ५०००) ४ का सबसे बड़ा पुरस्कार श्री तीर्थ कमलको प्राप्त हुआ है तथा ५०) ४ का पुरस्कार श्री योवर्धन महबूबाणी श्री कनहूबख्श बास्वानाणी तथा श्री परसराम बिज्या' को मिल चुका है।

सिन्धी-साहित्य-सम्मेलन

भारतमें आनेके बाद सिन्धी-साहित्य-सम्मेलनकी स्थापना हुई है। यद्यपि सम्बत् २००० में हैदराबादमें विजय सम्मेलनके अवसरपर सिन्धी-साहित्य-सम्मेलन श्री नामराजीजीके सम्पादित्वमें हुआ था फिर भी भारत ही इसका उद्गम-स्थान माना जाएगा। इसके अधिवेशन बम्बई, दिल्ली मागपुर, गाँधीधाम और मोराना आदिमें कमरा संबंधी अमरामदास बीरठराम प्रोफेसर मारामणदास मस्कानी प्रो यू एम मस्कानी प्रो लालसिंह अजवाणी आदिकी अध्यक्षतामें हो चुके हैं।

पाकिस्तानमें साहित्य-सृजन

विभाजनके बाद सिन्ध (पाकिस्तान) में भी साहित्यकी सर्जनोन्मुखी उन्नति हुई है। सिन्धी-अरबी-सोमाहनीने बिना किसी भेदभावके हिन्दुओं द्वारा लिखित अप्राप्य पुस्तकोंका जीर्णोद्धार किया है अर्थात् उन्हें नए निराले प्रकाशित करवाया है। सिन्धी-अरबी-बोर्डके अलावा मुस्लिम अरबी-सोमाहनी भी इस विषयमें काम कर रही है। अन्य सामिक पत्रिकाओंके अलावा महजान और नई विजयी नामक त्रैमासिक पत्रिकाएँ बिना उल्लेखनीय हैं।

यह स्वीकार करनेमें कोई अत्युक्ति न होगी कि जितना साहित्य सिन्धमें अभी शताब्दीमें प्रकाशित नहीं हो सका उतना साहित्य यहाँ १५ वर्षोंके अन्दर सिन्धी विद्वानोंने प्रकाशित करवाया है। प्रमाणस्वरूप १९३६ के नवम्बरमें दिल्लीमें साहित्य अकादमीने सरकार द्वारा स्वीकृत १४ भाषाओंके साहित्यका प्रदर्शन किया था उनमें एक स्टाक सिन्धी भाषाके पुस्तकोंका भी था जिसमें विभिन्न विषयोंपर चुनी हुई ८३ पुस्तकें रखी हुई थी। यदि पूरी तौरमें छान-बीन की जाए, तो बिना किसी शक के पता चलेगा कि पाँच छद्म हजारमें ज्यादा पुस्तकें सिन्धी भाषामें उपलब्ध हैं।

इस प्रकारसे हम देखते हैं कि आज सिन्धी-साहित्य विप्लवित्त विकासोन्मुख ही है। आज ऐसे अनेक लेखक सिन्धी भाषामें सामने आ रहे हैं जिनसे हमें निकट भविष्यमें कुछ अपूर्व साहित्यके उपलब्धिकी-आशा है।

• • •

किशिनचन्द्र 'वेवसि'

[कवि-परिचय]

किशिनचन्द 'वेबसि'

• • •

मिथी काव्य-अवतार मूक्री सन्तों तथा वेदाली साधुओंकी काव्य-मुरमर्क के प्रवाहित होनेके बाद यहाँ तक एक चुप्पी रही। बीच-बीचमें जो कवि हुए, वे पिनी-पिनाई बाउंकी ही अभिव्यञ्जना करते रहे। १० वीं शताब्दीके मध्यम कुछ कवियोंने जो कुछ लिखा वह उर्दू कवियोंकी तकल ही थी जिसमें इफ्क-मिजाजी अथवा बाह्य मौन्यकी ही भरमार थी।

बंक-बंक-जान्नात्मके कारण राष्ट्रीय समेग भारतके पश्चिमी अञ्चलके कोनेमें पड़ हुए सिन्ध तक भी धूर्त चुका वा कमस्वरूप ठोकाराम बाकाजी तथा अनहन्व बिबामियके राष्ट्रीय बातोंकी प्रतिध्वनि सुनाई पड़ी। फिर भी यह कहनेमें अशुक्ति न होगी कि किशिनचन्द वेबसि के काव्य-क्षेत्रमें पदार्पण करनेमें मिथी-व्याध्यमें नई वेगना आ गई। वेबसि की भाषा इतनी शक्तिशालिनी तथा मीठवपूर्ण है कि यदि इनका जन्म किसी स्वतन्त्र देशमें हुआ होता अथवा यों कहिए कि इनके निर्वाहके लिए सरकारी नौकरीमें अलग किसी स्वतन्त्र बुलिवा महारा होना तो इनकी भाषा वह भाग जलस्रोतों जो सार प्रान्तके नवयुवकोंमें एक नया ही जोस भर देनी। ऐसे कविको जन्म देना सीमाध्य मिश्रको प्राप्त हुआ।

किशिनचन्द 'वेबसि' के पूज्य मुस्तामसे आकर मिश्रमें बसे जहाँ लाइवावा नगरमें २५ फरवरी १८८१ ई में किशिनचन्दजीका जन्म हुआ।

आप टीचर ट्रेनिंग स्कूल (सिन्धी भाषामें) की पढ़ाई समाप्त कर अध्यापकके रूपमें सरकारी बीररीमें प्रविष्ट हुए और अन्त तक मिश्रके गाँवोंमें अध्यापक रहकर आपन वेगान प्राप्त की।

बच्चोंसे प्रेम

बेबसि साई ने यद्यपि अपने अन्तिम दस वर्षोंमें शिक्षणा बन्द कर दिया था फिर भी वे बच्चोंको न भुला सके। इन अन्तिम वर्षोंमें इन्होंने बच्चोंके लिए बड़े ही सिया प्रब गीत लिखे हैं। भका बिनकी सारी आयु बच्चोंके साम् अतीत हुई हो यह बच्चोंको कैसे भुला सकता था।

इनकी ये रचनाएँ धीरी घेर में छपी हैं जिसे सरकारने उसे पाठ्य पुस्तकके रूपमें स्वीकृत किया था। विरादरी नामक कवितामें वे बच्चों द्वारा कहम्वाते हैं —

असी बात्सक माहपू तुंहिआ पिता परमात्मा आता,
निरात्म्यं जे बिपू बोस्युं निरात्मा ध्या करी जाधा
रंगनि बोस्युनि ऐं कीमियत जा असा ये कर्तुं व्यी छाता ?
हकीकतमें असी भाउर पिता तिहुई खबी ताता।

[हे परमात्मा ! हम तुम्हारे ही बाउर हैं। मते ही निराकी भापाएँ हों निरासी रतन-सहन और बाक-बाक हो लेकिन इन वनों भापाओं और आठियोंके कारण हममें भेद किसलिए ? वास्तवमें हम सब भाई-भाई हैं और एक ही प्रभु हमारा पिता हैं।]

वे आमे लिखते हैं —

जाति बरन रंग कम जो साईअ बदि ना फेर,
हू ठुअ हुरकीहू तां रजे रजे न कीहू तां वैर।

[प्रभुके पास जाति वर्ण रंग तथा रूपका कोई भेद नहीं है। वे सबके साथ प्रेम ही रखते हैं उनके पास वैर या द्वेषका नाम उठ नहीं है।]

सर्वस्व समर्पणका स्वप्न इन्होंने बहुत पहले देखा था। सन् १९२५-२६ में लिखी हुई नेकी नामक कवितामें आपने लिखा है —

विस्वहि में बँदि जे यवई पासु कनु
न घानु आहि बाणी त जेटा वे यनु
न यल आहि मुवाफिक त जरिये वे तनु
न तनु अ तबानी लडे त मिठिडो बचनु
यपरि की न की तोते दियनी जबर
किया पर जले लाह बिपयो अबर।

[यदि तुम्हारे पास धन है, तो गरीबोंको बाँट दो यदि धन पर्याप्त नहीं है तो मनकी भेंट दो यदि मन ठीक नहीं है तो तन अर्पित करो और यदि तन भी स्वस्थ नहीं है तो सीठे बचन बोझो। लेकिन तुम्हें कुछ-न कुछ देना जरूर है और परोपकारके लिए अवश्य ही अपनेको म्यौछावर करना है।]

स्वर्गवास

स्वर्गवास होनेसे १० वर्ष पहले बेबनि साह ने एक प्रकारस बानप्रस्थ हो ल किया था। वे बाहर बहुत ही कम निकलते और घरपर रहकर ही अपना पैतृक व्यवसाय अर्थात् होम्यार्थी इलाज करते थे। यद्यपि इनके पिता हार्मोरोथ न होकर मूनानी हकीम थे। फिर भी ऐसा कहनेमें असुक्ति नहीं होगी कि इलाज करना उनका पैतृक व्यवसाय था।

इन हम वर्षोंमें इन्होंने अपने इष्टदेव भगवान श्रीहृष्णमें खूब मन रमाया और धर्मन-शान्ति का गहरा अध्ययन किया था।

उन दिनों प्रति रविवारको घाड़ महरके तिनारें बस हुए ज्ञान-बागमें श्रीमद् भगवद्गीता अथवा गुरुदेवकी सावना और गीताञ्जलि पर प्रवचन हुआ करते थे।

'बेबनि साह'ने यद्यपि खुले आम राजनीतिक आन्दोलनमें भाग नहीं लिया फिर भी उनके हृदयमें स्वराज्य-प्राप्तिकी लक्ष्मण गहरी पैठी हुई थी।

स्वर्गवाससे पहले आप पीच महीनेकी सम्मी अवधि तक बीमार रहे। सन्तोषका विषय यही रहा कि आपने अपनी मृत्युसे पहले भारतको स्वतन्त्र देखा लिया। २३ दिसम्बर सन् १९४७ की शामको आप स्वर्गवासी हुए।

रचनाएँ — १ छन्द बेबनि २ धीरी छन्द ३ मौजी नीत (बच्चोंके लिए) ४ कुछ नामक जीवन कविता।

कविने अपने विषयमें स्वयं इस प्रकार लिखा है —

यंज जाना मुपु यंजो जाति ओत्तन जासिते
आहि कु बिरत पां मित्तल कामिल कबीतर स कर्त्तव।

[पुत्र और अज्ञान निधियोंको विधन प्रकारस खोतलक मिए प्रवृत्ति महाकविक हाकमें बुझी समर्पित करनी है।]

इसी बचनके अनुसार बेबनि साहबन अपने अन्तिम दिन भाग्यीय और सुखी बान-शान्तिकी कई कुरिबयो शुभजानेमें व्यतीत किए, पत्रम्बरूप मामूली मिर्च और संभा जू लहियू नामक कबिनाएँ प्रशानमें आई। इनका बर्चन आग दिया जाएगा।

सिन्धुके प्रसिद्ध विद्वान् प्रोफेसर कार्लसिंह अम्बानी लिखते हैं— बलिष्ठ 'सैन्ध' और 'चन्द्रकान्ता' के रोगसे निकले हुए भूमताओं और दम सानों शोकसमन और बमीर हमरों ताम्रमल मल्लूकों बहार बरबैरों बनावलियों और खंभुमन बाराओं मज्ज परिवों और मल्लकोंने एक तरफ दिमाग खराब किया था ही दूसरी तरफ पेयारों और सिद्धयों तहकानों और गुण कमेयियों तथा बिजलीके नेत्रोंने दिलको डीवाडोम कर दिया था उस समय बंकिम तथा बाबू धिव बटलाऊकी रचनाओंने मेरे लिए सम्झौतनीक काम किया।

उसी प्रकार जब रामा और परबोना गुल और बुलबुल हुल बुलिक और बरम बाहो जाब और ताब नाब और नियाम बहार और धराब बाबि बोयी जपमा और मककारोंने बैत बाबी अनुप्रासों तथा बे माना रीसों (छन्दों) ने मनको दुखी कर दिया था तब लाङ्काला निवासी एक वरीय बम्पाक की निधिन-बम्प सीर्षदास बाबी न बेबसि नामसे अधुर बीतों सुन्दर मजनों और बुद्धिमत्ता पून सनकों (सामूझी सिपू) द्वारा वृणित बापु मरबककी बुद्ध किया और निरुधामसे बाधाकी लफ्फ प्रकट की।

शाह साहबका प्रभाव

मेने श्री बेबसि साई की बीबनीमें लिखाया है कि बारम्भमें उनपर शाह अब्दुल कलीक सबल तथा सामी बाबि कवियोंका प्रभाव था वे स्वयं इस बातकी इस प्रकार प्रकट करते हैं—

बाहि हरकहि बैत अंदरि पस्त्रि पस्टा मिति बी
हर कलीक-लातिमें ला लंब लंदी सलिकार बाहि,
बाये-ब्राह्मीय मां मिळी व्यो बर्हु गुल जो की चरो,
छा बचा 'बेबसि' मसिसि जा हँसती हुबिकार बाहि।

[शाह अब्दुल कलीकके काव्यके बारेमें लिखते हैं कि—प्रत्येक दोहेमें प्रेमकी पस्त है और प्रत्येक कलीक लाति (कलरब)में प्रेमकी ही ललबाव (मधुर मृञ्जार) छळती है। उस विद्याल उद्यानमें मे मुझे भी फूलकी पत्तरी मिल गई।]

उस फूलकी पत्तरीका सौरभ उनकी जोति सवार कुरियत हुल
'सूई' की सजा भारि कई बहिलाओंमें मुखरित है।

हुल नामक गीतमें वे लिखते हैं—

बारो संसाह व्यो बरिमिनि बे अया दाबु दिवे
बागु गुल, हार दिवे अनुर बी गुरहायि दिव
भील मोतुनि जा अपों भीज ला पहिराबु दिवे

साक, मानून रतन सीनु, कपो जाचि बियो
 बानी हर जिम्त बधी सूर्ह जे सरबार अपर्पा
 ताबड हर बिलि बू हर्ष हुस्न जे सरिकरि अपर्पा।

[सारा संसार सौन्दर्य कपो पद्मिनीकी दान दे रहा है बाग फूल
 मार-मारकर देठा है और जान बैठी है साक माकूत सोना जौरी आदि। प्रत्येक
 वस्तु इस सौन्दर्यके सरदारके सामने अकजुलि भरकर जाती है और इस हुस्नकी
 सरकारके आगे प्रत्येक हृदयकी सीमाएँ बन्धीभूत हैं।]

कवि निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा सत्यम (प्रभु) का आवास प्राप्त करता है -

जा पिआबोय जे मुझे मुहिय सही मूरत में,
 सूर्ह 'बबसि' ता हकीकीम सह सजी कुदिरत में
 का बि बी सूर्ह मुने बीज न बी कितिरत में
 आबजा हुस्नु हकीमत जे सचा सूरत में
 जो सधे सरि की हवातिनि जे हुकूमत जे पदे,
 हुब हरि बीजमें विस्वार जो बीबाह करे।

[जो आनन्द मित्राजी (बाह्य प्रेमी) को अपने प्रेमी (व्यक्तिगत)
 में आता है, वही आनन्द हकीकी (प्रभु-प्रेमी) सम्पूर्ण ग्रहणमें अनुभव करता है
 उसे इन सृष्टिमें प्रभुकी सुन्दरताके अनिरुद्ध किसी अन्य वस्तुका आवास नहीं
 होता। यदि कोई इन इन्तियोंके सामने मुक्त हो सके तो सत्य ही वह प्रत्यक्ष
 वस्तुमें प्रियतमका दर्शन पा जाए।]

मानव जब तक इन्द्रियोंके बन्धीभूत है तब तक इन्द्रियाणीत आनन्दक
 सुखका अनुभव नहीं कर सकता। मानव मायाके बन्धीभूत होकर सच्चिदानन्दका
 वह सत्य सत्त्वस्वरूप जो सर्वत्र तथा अनेक जगज्जोके रूपोंमें एक ही परब्रह्मका
 रूप है अनुभव नहीं कर पाता। केवल प्रभु कीलामय है। उस तो मण-मण
 रंज रचाकर ही विविध और विविध लीलाओं द्वारा अपने प्रेमी (धर्म) का
 रिझाना जाना है। 'बेबसि' कोई अपने जोगि नामक गीतमें लिखत है -

अपारी आदि छापी जो बली जे अलि रहिना मां
 पी बरंग रचाई रंगपुरि में रंग म्यारा जो।

[अनादि और अनन्त होनेपर भी तुम अपनी रचना (सृष्टि) द्वारा
 व्यक्त होने हो। बेरंगी (रंग-रहित रहित) हारत भी रंगपुर (व्यक्त सृष्टि)
 में मण-मण रंज रचान हो।]

क मिश्री कि-३

लिफ्टों केस में सौई! पत्नी को हुस्न जातीम के
 रहे बहिमत यंता कठिरत करी केबा पतारा बी।
 [ऐ स्वामी! लिफ्टों (कप और बर्न) केसम आप जाती हुस्न (बम्पक
 सीन्दर्य) का जानन सेते हो और एकदमसे बनेकत्व की सृष्टिका कितना प्रसार
 करते हो!]

अकपा। कप पम्बर में जलाए प्रेम की जगिनी
 विषय सब आप जाहूती रहीं दिलि जा कुमारा बी।
 [हे प्रभु, आप निराकार होकर भी कप मन्दिरेमें प्रेमकी जगिनी जलाकर,
 अपनी जाहूति डालनेके लिए हृदयके द्वारोंका निर्माण करते हो।]

भगवानको भी इस सीमाका आनन्द लमी प्राप्त हाया है जब वह अपनी
 जाहूति देता है।

इस सीमामयी सृष्टि द्वारा ही भगवान मनुष्यको अपना भेद सबबा
 रहस्य बतलाता है। यद्यपि उर्बे किसी सायरने कहा भी है —

हे दिया सब कुछ भयर न अपना मुराग दिया।
 [भगवानने सब कुछ देकर भी अपना भेद नहीं दिया।]

कैबलि 'बेबसि' इम्तान नामक वीतने बतलाते हैं —

कह तुंहिने जे करे नूर मो किम हा वैदा,
 जे हुमे बेसि न हा भेद बताइय जो बिद्यानु।
 [ऐ मनुष्य! उसे यदि अपने भेद बजानेका बिचार न होना तो वह
 तुम्हें अपनी कह (आत्मा) से क्यों कर उत्पन्न करता? लेकिन वह भेद प्रेमके
 विषय प्राप्त हो नहीं सकता।]

तो मैं यम्हा जहाँहि प्रेम भरी दिलि से भरी,
 हो लहाँहि धार करे बेसि मिलाइय जो बिद्यानु।
 [तुमको भगवानने जब प्रेमपूर्ण हृदयसे भरा तब तुम्हें अपनेसे विमुक्त कर
 (उद्धार) अपनेमें लीन करनेका बिचार या क्याकि] —

इसका धारा न हुमे दिलि से हृदयत लीहूमी,
 हो न ताकन तां को कुदिरत से बजाइय जो बिद्यानु
 [प्रेमके बिना किसी मध्यमा हृदयपर धामन हो नहीं मस्ता उस अपनी
 शक्ति द्वारा तुम्हें बजानेका बिचार नहीं था।]

यदि भववान गुममे प्रेमकी अभिलाषा रखता है तो वह भी गुमपर ही अपना प्रेम प्रकट करता है —

तुहिमे रचिना ते रस्यो हुसने के छा येनु कपाल
बोटे तुहिमे ते उज्यो प्रिति पचाइल को जियालु।

[तुम्हारे निर्माणपर ही सौन्दर्य पराकाष्ठा पर पहुँचा तुम्हारी सृष्टि द्वारा ही प्रेम अपने प्रेमको परिपक्वतास्वामें पहुँचाने का विचार करते थे।]

प्रकृति-व्ययन

यद्यपि बेबसि साईने प्रकृतिका खुलकर वर्णन नहीं किया है फिर भी यहाँ यहाँ उसके छोट हृदयकी प्रकृतिस्तुत कर देने हैं। 'बेबसि' साईने प्रत्येक विषयपर अपनी रचनाएँ की हूँ भायर ही कोई ऐसा विषय हो जा उनमें छूँ पाया हो फिर भी इनका कहना पड़ेगा कि प्रत्येक विषय पर रचना करते हुए भी उनका बाहुल्य अथवा प्राबुध्य नहीं है। केवल उनकी मार्मिकता स्पष्ट तक ही अपनी कवनीकी सीमित रहा है। अन्तु। उद्यानका वर्णन करते हुए वे लिखते हैं —

कुलवारि कूह माँ करी कुलनि बी धूम धाम
छा लाम लाम ते दिखया गुल सानु मांनु जामु
येहो, मुलाबु बीर के दिखे बघिरबपूँ इनामु
छदनम् बताए शोक मरे, मोतपुनि मुठपूँ मुबामु।

(‘बापु बहार’)

[उद्यान पूर्ण मौसममें फूल उग्रा फूलोंकी बाहर छा मरे, प्रत्येक पात्रापर लाल फूल मिल उठ येँग और मुलाबु बुष्टिको उपहार स्वरूप आधियाँ प्रदान कर रहे हैं और हिमकण शीतले मोनियोंको मुट्ठीमें भर भरकर लगा रहे हैं।]

लमी लाला के लालई जमक येँगे मुलनि लाले,
बस्यो मुलवारि में जाई, ककर को सोन मुनिर्वनि को।
मुलाबो रम का प्याला दिना नगित के येँ लाला
ककोपी मेथ मतवाला, अजबु इमहाब अजबपुनि को।

[लालामें लाली भर गई है, येँमें जमक आ गई है। ऐसा भावूम होना है कि वर्षाकमें स्पर्शकी बारिश हो उठे है।]

मया मोड़

भी बेबसि और मुसी बच्चोंके बाद मध्यवर्ती काल भरकी और पारसीकी पत्रों और मसनवियोंके प्रभावक कारण गायरामें नेमुत्रे दिलरबा और भावे शौमरबी लगान थी। उन्हें मिश्ररी मध्यता तथा अनिष्टायाओकी छनिक भी पचाई न पा। मगर भी 'बेबसि' ने घाब जगन्में नया मोड़ उपस्थित किया।

उनसे काव्यका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि वे फरसी भाषा तथा छन्द-शास्त्रके अच्छे ज्ञाता थे। यद्यपि फारसीतानि फारसीतके बन्धनमें बन्धे रहे फिर भी उन नियमोंके न तो खीरी ही बने और न मिचारी ही। बल्क जब भाषाबोधमें आते तो 'बन्धन' 'बन्धन' 'काव्य' और 'रवीक' आदि धरे ही रहे बाते और वे भावों की गलीकी तरह तटोको तोड़कर अग्रसर होते।

भी बेबसि कहीं-कहीं 'मुल' और 'बुलबुल' को भी नहीं भूले मगर उन्हें भी उन्होंने नए ढंगसे ही प्रस्तुत किया —

आ खीरी लखीर उति जिति लखु बिलि सय्यानु बाहि,
बुलबुलमुनि ता बापमें अब जब पुछो वे बातु बाहि।

[यहाँ आखटक बड़ा कठोर हृदय है वहाँ युक्ति किस कामकी। आब उद्यानमें निश्चय ही बुलबुलोंके साथ अत्याचार है मगर उमी समझमें ही लिखते हैं—]

अभि लका बुनिया बे मुहँ तां लाहि बुल बसी नकाबु
मुल बसि लख हूर बुनिया, बिलिखवा बिलि बाहि बाहि
उस संवसि लखीह बेबसि माह ता बां तां कबे,
कह कूबां आधिबनि लख बुकि कूबा आबाबु बाहि।

[प्रसन्नतापूर्ण संसारके मुँहसे अवसादपूर्ण आवाजकी हटा दो क्योंकि वो इसका मुलकपमें वर्तन करते हैं उनके लिए बन्धन बुनिया प्रियतमा और प्रसन्न हृदय है।]

सबसे ही 'बेबसि' ने निष्ठावाधियों और संसारकी दुष्टपूर्ण माननेवालोंके लिए आशा और आनन्दका सन्देश दिया है। न मानूम क्या समझकर उन्होंने अपने लिए बेबस का उपनाम चुना। वास्तवमें वे तो सबक आशावादी हैं।

इन्सान नामक चीतने आप लिखते हैं —

बा बि बाही न अटक बाहि बे 'बेबसि' न बनी
आहि बुनियामें अगर धूम मचाइन जो बियाबु।

[यदि ममारम धम मचावेता तुम्हारा बिचार है तो तुम्हारे सामने कोई बाबा टिक नहीं गनती। हाँ यदि अपनेकी बेबस (बिबस) न मानो।]

जीवनक बापेय जो हमारी बुल मावमाई है उनका परित्याग करनेका परामर्श देने हुए जिम्हरी बहिनमें न मुनमुना है —

ब किनारे बहिह माहे तुहिमी बाती बिबमी
आ मुने कोने कना बी ता लिकली बिबमी।

[तुम्हारा अमन जीवन बिना किनारोंका नागर है जिसका तू बुलबुल और नागवान मानकर बैठा है, वह लक्ष्मण माय स्वयं और अमर है!]

भूँहमें बहिबी बि फिअं हो बन्म बिनु सातिमु मुझाणु,
तो बनी मिलियेस सले अमरि मुझासी बिबानी॥

[पृथ्वीके पीठपर दबकर भी बीज मुझ और सगल बा केकिन तुमने केवल निमृत्त पोषेमे ही जीवन पहचाया।]

बन्म बिस्मानी भुताए अर्था ऊँचे से उड़े
पी रले आजाणु पी छन छा न छाती बिन्बपी।

[जिस समय पारैरिक काराकी कान्कर यह जीवन आकाशमें उड़ता है, तो स्वतन्त्र होनेपर क्या-क्या नहीं कर पाता।]

बेबनि जीवनको घावव्रत मानते हैं और सब-साथ पुनरजन्मके प्रति भी अस्वाभाव है —

हरि हयासी बईजी पुन हार हसीअ में बपी
नाहि हीअ हिंकिडी कइति हाअक, हयासी बिबपी।

[अस्तित्वकी माकाम प्रत्येक जीवन-मुष्प केन्द्रीय स्थान ग्रहण करता है, यह प्रस्तुत जीवन ही केवल एक जीवन नहीं है।]

मृत्युकी भी वे जीवनका एक परिवर्तित रूप ही मानते हैं —

अ हुअ हा नेसीअ ऐ नाहि में अँबामु मौतु
हुअ बुनियामें न व्ये हा हिन तरहि ताँ आमु मौतु,
बिन्बपीअ बे आय लह व्यो राति बी आरामु मौतु
बो अमरता बी मुणाए मुबुह ताँ वीपामु मौतु
दिअ कवीनी रोअु रोअामु मितु नवाईअ ताँ नजी
राति बे परे ले बीरीरो अवे धूरिनु संजी।

(मौतु)

[यदि मृत्युका अन्तिम रूप नश्वरता और माप्तिमें ही होना तो संसारमें मृत्यु इस प्रकार माधारण न होगी। जीवन-मग्न्याके लिए रात्रिमें ही मृत्यु कदी विधाम है और प्रमाण ही अमरत्वका मध्यम देना है। यहा सर्वदा प्रमाण्य यह प्राचीनतम और निरय नूननग भी नूनन सूर्य विम प्रकार रात्रिके परदेको चीरना हुआ बाहर निचलता है।]

साई बेबनि मृत्युमें भी प्रमत्तताका ही अनुभव करने हैं —

मौतु बी लुहिपो मलाइकु आहि रहिमल बे समानि
बनि मुमाईअ ऐ मुराअप ते कअ करिड़ी कमान
बुहल सातीअ अईक हातीअ बे मुताए अमुमानु,

पुण्य पेजानीज से माने नब निजाकत जो निदानु
उमिरि जे बहिरि तां, बेबसि भुंज जो मेटे छड़े,
नेहु बरि अहमाल जे बेसरि तां जो रेटे छड़े।

[प्रसार पूर्ण है यह मृत्यु रूपी सुखर देवदूत जो कुरूपता और मुझापेपर कठोर अनुप दाने हुए है जो बप भारसे झुकी हुई प्राचीनता और दुर्बलताको निरुप ही भुजा देता है जो कामुके बेहूसे पोषणमय मिटाकर, पुण्य रूपी रूपपर लावण्यके चिह्न प्रकट करता है और साव-साव विस्मृति क्षाण सद् कर्मोंको मिटा देता है।]

मनीनताके उपासक

हृदयसे प्राचीनताके पुजारी तथा दार्शनिक मनसे कृष्णोपासक कर्म द्वारा मनीनताके साव सायम्बस्य स्थापित करनेवाके बेबसि पिछड़ी हुई भारत-सन्तानको मन्मथकी मनीनताके साव अछतर होनेका उन्मुख देनेमें वे कभी नहीं पिछड़े बल्कि इसमें ही उन्नतिके साधनोंका संग्रहण करते हुए नवाई पीढीमें उन्हीं लिखा है —

मा हुनिक तो जो नमूने में नमों पादु पड़े,
जी जिजानीज में मयारि फल दुराचार्य पड़े।

[वही कथा है, जो नमूनेमें मया गलन पड़ जाने तथा उसकी बानी तो मनीन हो लेकिन उसमें प्राचीनताकी पुट हो।]

कवि इस बारेमें हल्ला माने बड़ मवा है कि यह तीक्ष्णकी भी मनीनताका मुझापेसी मानता है —

जो न हरि शङ्क से हुची छाप नवाई बहिं जी
हुस्र जोजो जे बिसै हुंज नवाई बहिंजी।

[ऐ मनीनता ! यदि तू प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं स्मरती तो सीखने भी अपने महत्वकी विपत्तिमें पड़ा हुआ पला।]

वे माने लिखने हैं —

धीठु जी रोज बिए पिरिह तां वीणामु अजीमु
जो नवाई अ जी नमों आह्रां, कवाला तां कबीमु
रनिज भुहिजी न पकड़े त न माहै तो हुकीमु
भू तां नब जी न हसे तहिजी जी हाकति प्ये लकीमु
जी हुनिर्निर्नु नवाईअ जो न करे, तां क्रिरे,
तहिजी लकिरीर बड़ी जोट ते 'बेबसि' जी क्रिरे।

[प्राण-काल हाथ ही दिन निप्य प्रति हमें एक मरान् मन्देय देता रहता है— ये नवीनम भी नवीनतम तथा प्राचीनम भी प्राचीनतम हैं वह बिडान अपना प्राणी नहीं जिसमें मेरे इस शब्दको न समझा और जो मेरे साथ नहीं चलता उसकी रक्षा नहीं करनी पड़े जाती है । नलाकार हाकर यदि नवीनताके आवरणमें आवरित नहीं होता तो उसका धाम्य परम सीमापर पहुँचकर भी गिर जाता है ।]

गोपीदासका प्रभाव

विश्ववन्द्य बापू कपी सूर्यके भारतीय छायापर उदित होन ही प्रत्येक शम्भु तथा भावनाएँ उनके पावमें अनुस्रवित हो उठीं । ऐसी अवस्थामें परीव मिश्रण से बाबूक कवि समा कीमे बंधूने रह सकते थे । भाँ भारतीयके इस बाबूक पुत्रकी देखनी भी उन्मुक्त होकर बाध्य-अपमूर्ति विचारने लगी और मिश्री कवियोंके लिए उसने एक नया पथ प्रकाश दिया ।

किसी समय जीर्ण परम्पराक सभ्यतामिच्छापर तथा १९१४ के विश्व-युद्धमें अंग्रेजीकी महायुद्धमें गीत लिखनेवाले आज राष्ट्रीयताके अमर गायक हो उठे और साध-साध हमी पावन गंयामें आयमन कर ओजपूर्ण भाषामें रचना करनेवाले नई नए कवियोंको उन्मुक्ति जग्य दिया —

मे उष्यस हुई ककन में गैर हिन्दी तन्तु का
लानु भरिमे बैदि बेवसि जी छकी छरिमाइकी ।

[यदि मेरे ककनमें एक भी अहिन्दी तन्तु होया तो मरनेके बाद मेरी लाग धरित होकर गरमा जायगी ।]

उनके पट्टमिष्य भी हृदयक 'दुःशासन' गुनगुना उठे —

लाम् मुहिओ दास, कजे आमातु हिन्दुस्तान में
प्ये न दास मुहिओ मरनु नागावि हिन्दुस्तानमें

[मेरी लाग स्वतन्त्र भारतमें ही उठे और प्रभु एसी दृष्टा करे कि मेरी मृत्यु दुष्टी और वैमर्हीन भारतमें न हो !]

और बाग्यधर्म स्वतन्त्र भारतमें मृत्यु होनेकी भी बेवसि जी की दृष्टा पूर्ण हुई ।

गोपीदासकी प्रत्येक विचार धाराको लेकर उनकी रचनाएँ हुई । 'विमान' 'मजदूर' 'जनता' के अन्वय 'मरीचकी शोषही' 'निष्ठा' 'हृदय' 'स्वतन्त्रता' 'मारी' 'नवीनता' 'माधुर्यमयीका मर्म' आदि रचनाओं द्वारा हमें गोपीदासकी विचारधाराका आभास मिलता है ।

जिस समय के लिखने हैं अन्ध ! मुझे न दास मरीचकी की मुद्रिणी (हे प्रभु ! इन मरीचकी की आँखोंको आँख तक न जाने देना ।) उस समय उनका

सहानुभूतिपूर्ण और नरीबोके दुःखमें दुखी हृदय सिमटकर उनकी शोषकियोंमें समाया हुआ दृष्टिबोचर होता है।

माँझीजी अभी बर्षा का सेवाधाम तक नहीं पहुँच पाये थे और साबरमतीमें ही उनके आन्दोलनोंकी हवा फँक रही थी उस समय ही अपनी अन्तर्दृष्टिसे कवि माँझीजीकी शक्तिको भाँप गए थे और उनको इंगित कर कबिने सिखा है —

पहिंज आऊँरि ओ इंसारे करि संभाके घोर सा
आहि तूँहिजे ही इंसारे जाति गँबी जोर सा
जे हनीं प्यो हुकुम हेकर बहिं मुजासिफ तोर सा
हिनु सागर ऐ हिमाक्य टकिरेवा यह ओर सा
हिन इंसारे ब रितानि न्यू अज अक्यू छाहुठि किरौड़,
हिन इंसारे ते अजनि बहिं सज्जु छाहुठि किरौड़।

[ऐ माँझीजी ! कहीं साबधानीके साथ अपनी औसतीका इंसारा करो क्योंकि तुम्हारा यह इंसारा ईश्वरीय शक्ति द्वारा प्रेरित है यदि किसी भी तरह तुम्हारी यह आज्ञा प्रचारित हो तो हिन्दुसामर और हिमाक्य बड़े शोरसे टकरा उठेंगे। तुम्हारे इस इंसारेकी ओर आज ध्यासठ करोड़ बाँधे उठी हुई हैं और इस इंसारेपर ध्यासठ करोड़ भुजाएँ ऊपरकी उठेनी।]

श्री बेवसि जी का माँझीजीम इसका विश्वास था कि बापूजी साबरमतीमें ही थे कि उन्हें निश्चय हो गया था कि यदि भारत माता को स्वतन्त्रता या मुक्त पहनाएँगे तो बापूजी ही —

ताज्जा बाबाही धुरे भारत तकन्नु तूँहिजे हवा
आहि हिंदुताम जे अज काह लापिअये सर्वा

[भारत आज तुम्हारे ही हाथों स्वतन्त्रताका मुकुट धारण करना चाहता है, उसे इस लैमोटीकानेपर बड़ा गर्व है !]

उस समय इनकी रचनाओंमें स्वतन्त्र-भक्ति और राष्ट्रीयताकी मजकूरियाँ पड़ती हैं। उन्होंने मजहूरके यमकी सराहना की —

बर्कती आज नि सां तूँहिजे बोह बी पाए बहिं,
बी पते रात से रबी ऐ जून से तूँहिजे अरोहू।

[तुम्हारी इन बरद मुजाबिले नारन ही निर्बलभ भक्ति जाती है और तुम्हारे ही जूनम रही और नरीफ (जमल) पीपिन होती है।]

मातिलदाने बीबिड़े में पीडिअनु केसी रवा ?

बीहजे बिनि जे बीह अंदरि पीडिअनु केसी रवा ?

[ऐ मजदूर! इस स्वामित्वके कोससूत्रों पेरा जाना और उसी तरह अपने ही हृदयकी पीड़ासे पीड़ित होना कहाँ तक उचित है?]

वे मजदूरिमको इभित करते हुए कहते हैं —

तू पहिने डोई को रस्तानि जा ऐं राखी को टकर,
 बी हमासिनि बाक डोइन लह रही। मितु मुत्तबिर,
 हुस्न जे हालति में बगिची बरि गिगाछुनि बी नि निआनु,
 पर रखी बेबागु बामनु बर्र जे अस्मात समानु

[तुम रास्तोंके परवर बोती हो और पहाड़ काटती हो और मजदूरिन बनकर भार उठानके लिए उत्कण्ठित रहती हो। सुन्दर रूपवासी होनेकी अवस्थामें यद्यपि तुम कृद्वृष्टियोंका शिकार बनती हो फिर भी स्वयंके छतीत्वके समान तुम अपने जीविकको निष्कलंक रखती हो (यह क्या कम भीरवकी बात है!)]

तीस वर्ष पहले जब सर्वोदयकी राख नहीं उठी थी तब बबसि की हस्तानी संवत् हो उठी थी —

करि कुम्पामें बिजि बदेरी—तू बि रहु मां भी रखा
 भावि मन बुरीज में फेरो—तू बि रहु मां भी रखा

[इस संसारमें अपने हृदयको बिछान बनाओ और अपनी मनोवृत्ति बदल दो जिससे तुम भी रखो और मैं भी रहुँ।]

पहिने छाछी महल मां घटि जे करि हिक कोठिड़ी
 बे असे मूं बहिजे लह पवगड़ी ठही सौं शूपिड़ी।
 करि तमना घटि तिबेरी—तू बि रहु मां भी रखा।

[यदि तू अपने बिसाल प्रासादसे एक कमरा भी बाली कर देवा तो मेरे जैसे निराश्रितके लिए सुन्दर शोपड़ी बन जाएगी। जब अपनी तीव्र इच्छाको सीमित करो जिससे तुम भी रखो और मैं भी रहुँ।]

साहूकारको फटकार बैठलाते हुए बरि बहता है —

आहि तरि बामाने इशरत कीहजे अजि आलाहि मां ?
 ताम राहत जो बजे बी कीहजे तन्तुनि तान मां ?
 कीह कमो तो नर जेजे खे मुचतु छाऊ भासिराव ?
 आहि सा माफि न गुरीको शर्म प्राप्त ओ प्रियाद।

[ए भनवान्! तुम्हारा यह बिलामपूरा जोखन किमक सारे मयनोमि भीमा हुआ है और यह जानन्दकी लगी जिसकी तीन तननम बज रही है और जिसन तुम-जैसे नर मक्खकी मुफ्तखार और वैभवावासी बनाया? इसका उत्तरमें वे लिखते हैं— यह मुष्ट अविचमना है, ओ गीहलुण पीड़ाभा शिकार बनी हुई है!]

छाहिणी इमरत जे आहत सँ बघायुह हरि बिकाव
तुहिजे छहिकनि तै हजारे बदन जाहिनि अरक बाव ।

[पापपूर्ण बिकासी स्वभावके कारण तुमने प्रत्येक बिकारको प्रोत्साहित किया है तुम्हारी इन ठहाकोंसे भरी हुई हँसीसे सड़कों आँखें अधुपूर्ण हो उठती हैं ।]

ये सब बातें 'बेबसि'जी ने उन दिनों किसी भी जब सिन्धी भाषामें प्रगतिवादीकी झू तक न थी —

किम् न बीबी जनि जारी सर्म राजनि वासिते ?

को कितानी कैंव कह्यो तबत बिनि जे तां लड़े ।

[धर्म और राज्योके नामपर युद्ध क्यों न होंगे ? जब धर्मोकी कैदके कारण वह (परमात्मा) हमारे हृदय सिंहासनसे उतर जाता है ।]

ज्यो उजड़ बिलि को मरुध बिजिहर को जब बीरानु जाहि

कामु राजा जिति बसै, किम् रामु बिचारो रड़े ?

[मेरे हृदयका मन्दिर उजड़ गया और श्रियतमका घर भी बीरान हो गया । जहाँपर कामराजाका निवास हो वहाँ बिचारा 'राम' कैद रह सकता है ।]

भौतिकवादके इस अग्न्याशको बेबानर भगवान भी उनसे बूझ गया है —

अरुध परीबनि जू कजामू भूपिबधू वासिफु बुधे

को मझीब, मतजिबि अरुध, बेबसि, दिकाने जां लड़े ।

[आज भगवान परीबोकी वास-कूसकी धूलियोंमें बसकर जमा रहा है । वह मन्दिरों मतजिबों आदिसे दूर भाग रहा है ।]

विज्ञानकी ओर झुल्लि करते हुए बबनि लिजने है —

तुहिजी तस्वीर बंतां कौम जो कुम्पाउ बसे

तुहिजे करिमाव भा बेबाव जो बर्ताउ बसे ।

[तुम्हारी तस्वीरसे ही तुम्हारे ऊपर जानि डारा दिया हुआ अग्न्याश प्रगट हो रहा है । तुम्हारी करिमावसे अग्न्याशका वर्तन प्रगट हो रहा है ।]

परीबोकी औपकिपोवा वर्णन करते हुए जब वे कहने हैं —

अला ! शुद्धे म छाल परीबनि जी भूपिड़ी ।

[हे प्रभु ! इन परीबोकी औपकिपोको जीव तक न जाए ।]

उन समय उनके हृदयकी सम्पूर्ण महानुभूति मित्राकर परीबके लिए माफ़ार हो उठती है —

जोह में मज्जो मधे यो मिठे छोडे कुमारि ते
 सादी गुजर बिसे न तबीबनि तंवार ते,
 पोड़पो बिसे यो बाधि बरेरी कमार ते
 पाकिज् पधे न हिमूं क शीम जे कुमार ते
 'बबलि' जिते अलाए न बिन्ता भी चुचिड़ी
 अला। मुड़े य साल पुरीबनि जी मुपिड़ी।

[जिन(भोगड़ी)में उद्योगकी रोटीपर ही आनन्द मनाया जाना है सीधा-सादा
 जीवन निर्वाह करनेके कारण जिन्हें कभी वैद्याका मुंह नहीं देखना पड़ता बल्कि
 यम करनेके कारण जिनकी आयु बड़ जानी है और जिनके आनन्दकी सम्पीयन विनाश
 कभी हाथी नहीं होना जहाँ बिन्ता रूपी चिनगारो नहीं बरसानी — है प्रम, इस
 गरीबकी शोचहीको बीच तन न आए।]

जीवनके लिए जो इमारे हृदयमें बुन साधना है उसका प्रतिचार करने हुए
 इन्सान नामक चीनमें कबि लिखना है —

आहि तंसारमें इन्सान। उजालो तोलां
 तोले को आहि भला वाक मरहाइव जो लियाल ?
 का बि आरो न अटक आहि जे बबलि न कपी
 अहि बुनियाने अमरि छुन मरहाइव जो लिखाल।

[ए मानव। यह संसार तुम्हींमें प्रकाशित है क्या कुछ कर दिखानेका
 तुम्हारा विचार नहीं है? यदि संसारमें तुम्हारा छुन मरनेका विचार है तो
 तुम्हारे सामन कोई भी बाधा उपस्थित नहीं हो सकती। हाँ यदि तुम अपनेको बचन
 (विषय बचवा साधर) न समझो।]

जिन्दगी नामक चीनमें कबि लिखना है —

बिसे हवार्न अ व हवनि तां भी अजयि जग धां कुरा
 यधे तोले तुई दिखल बहाण्ड जाती जिहरी।

[तू जीवनकी सीमाओं तथा स्वयं गगनमें असम ह्रा गया यद्यपि तूम बहाण्डके
 बुद्धि-जीवनका सीमाय प्राप्त था !]

मूह जे बबिबई बि बिसे हो कपु बिजु लालिपु कुआप
 तो दपी नितिरपु लसे अबरि मुकानी जिहरी।

[पृथ्वीके भीतर बहरर भी बीज जिन प्रकार अखण्ड और मजबूत था।
 तुमने ना केवल निम्न पीढ़ीके भीतर ही जीवनका पट्टाका।]

काव्य-जीवनम भी किञ्चित् चन्द्र बचति' में पहले पहले ईस-बन्दना तथा प्राकृतिक सौन्दर्यपर ही सेवनी चलाई। गाँधी-युगके प्रभावसे अभिमूढ होकर इनकी सेवनीने देशभक्ति और राष्ट्रीयताकी बाग उगधी लेकिन अहिंसाके पुजारी बनकर कबि साबरमतीके संग में लिखता है—जिस समय युद्धके कष्टोंके कारण पश्चिमी संसार रो रहा था उनके आँखोंसे आँसुओंकी धारा प्रवाहित थी और अस्मोसि रक्त बह रहा था उस समय उनके गानोंमें गाँधीजीकी यह आवाज आई —

कामियाबीस लड़ कींहे जूनु हारण जो क़दर,

तेजु तोड़ुनि तां दरन जो ऐ न पारन जो क़दर ।

[संक्रमणके लिए न तो खुश मित्रोंकी आवश्यकता है और न भयानक शत्रुओंसे मरने का बड़ा मारनकी।]

जो उनके लुहिजे लहरक ते मवां ताम्सी कमर
लुहिजे हलचल ते किये बी कासि बुनिया भी नजर,
आहि जइयह ते हिन ई आबिमुये जो बसर
सोम लुहिजी सहिबंद सतार साठरि कुसि क़दर,
अबिजी कितरल जो बियजो आहि इन मां कासिमो
का दि छाहो कौन कब्रदा कूने नाहक जो बिमो।

[तुम्हारे इन आन्दोलनकी ओर मूर्ख और चमड़े भी विमिश्र नवनोंसे टाक रहे हैं और सारे संसारकी आँखें इस ओर मड़ी हुई हैं। अभिव्यक्ति इस प्रयोगका प्रभाव होनेवाला है और तुम्हारी विजय इस हाँफते हुए संसारके लिए सबका सूचनाके रूपमें है। बुराईवाँ इसीके सामरिक द्वारा मध्य होंगी क्योंकि कोई भी राष्ट्र आत्म्यायुक्त रक्त-पातका उत्तरदायित्व नहीं लेता।]

अहिंसा और गाँधीवादका यदि सिंगम प्रचार किया तो 'बेबमि' और उनके विप्या "दिलमीर और "बुवाबल द्वारा —

पाणही बुनिया हाथि भजाँबी अहिंसा अनयोस अमुस,

ऐदामिक कमिगोके तां नत प्रलह का सामानु गाँधी।

[अब हमारे स्वयं ही अहिंसाके अमूम्य मिश्रातकी स्वीकार करेगा, बन्ध्या ऐ गाँधी! उनके लिए एतामिक कम प्रसन्नता सामान होगा।]

यदि मानवताके कल्याणक लिए मानवम उत्सर्गकी ओसा करने है तो गाँधीके भगवानकी तरह भयानकता नित्य जाली करने रहनेका लम्बेरा भी देन है —
अस्मा रूप भस्मरमें जलाए प्रेनजी अस्मिनी,
दियज लड़ आप आहूनी रबीं दितिया बुजारा बी।

[हृदय और रस रहित (निर्गुन) प्रभु! तुम हम कपवाले (मगुन) मन्दिरमें प्रमदी जलिन जलाकर, अपनी जाड़ुनि हनेके लिए हृदयके द्वार बनाने हा।]

जहाँ एक ओर बेबनि 'दर बाधुबीका प्रभाव पड़ा ता दूसरी ओर बिन्दकवि श्रीमन्नाय टाकुरक पबका अनुसरण करनम भी बे पीछे नहीं रहे। रवि बाबूके मार्ग सिब मुन्दर की समक उनक काव्यमें जहाँ-जहाँ प्रकट है। उन्होंने अपने जीवनके अन्तिम दिनेमें बाल और लगभुक (मूडीबाइ) की सुन्निवा मुक्तजानेमें ही अपने सम्पदा समुपदा बिधा। पपाकी लहरों और समुद्रकी सुन्निपा में य भाव जहाँ-जहाँ बिखरे हुए है।

वे प्रापना नामक गीतमें लिखने ह —

जहाँचहो ओहका बिसा हरि बीममें तूँहि ओ बिटो
अहिही बिसमें करि बिमिकाट ता बीडाधि तू।

[हे प्रभु! तू मेरे हृदयमें बहु ज्योत्स्ना ज्योतिष्ठ कर बिममें मैं मुक्तारा समारोह प्रत्येक क्षणमें स्पष्ट रूपमें दृष्ट मई।] क्योंकि देखना है कि —

ओग, अप तप साधना अपिती मधापी जान में
ओ हगे ही धस्तु माया की समर अत्रियध किसे?

[बाब अप तप समाधि साधना और अज्ञान आदिमें भी यह मायाका जल अत्रगर मरा काटना छटा है।]

इसका प्रतिकार ता हम प्रेमकी पीड़ा द्वारा ही कर सकत हैं —

बीड़ धारा पीड़ नछे, पीड़ बिनु नछे लबीध
बिनु लबीधे नाहि धीरे, बई आहि रिक्त पीड़ लइ।

[क्योंकि मिठा पीड़ा उत्पन्न नहीं होती और पीड़ाक मिठाप लबीध वेश नहीं हो सकता और लबीधके मिठाप चागनी (रस) वेश नहीं हो सकती। सम्बुध पीड़ा ही हृदयका पवित्र बनानेवाणी है।]

प्रम सागरमें पवन ना माधना मिटिबी बई
हिन पवित्रिजि जल अरिज अइ पापबी पटिओ बई

[प्रम माधनमें पाता कपानेम समस्त मिट दला और इस पवित्र जलमें अकालात वानम पागनी अइ ही नष्ट हो गई।] तो त्रिदशमक लिए मन्थूर और धाम लबरेज बनता होगा —

शोक भी बहुत धर बिलि भी शम्भ तबरेजी मजो
मुहिन लइ मन्सूर भी, बाजारि रतरेजी मजो

[ऐ साधक ! शर बिछ होकर शम्भ तबरेजके पबका आनन्द मूटो और प्रियतमके सिंग मन्सूर बनकर रक्त बहानका आनन्द मूटो।]

निजत्वको मिटानेमे ही वह आनन्द आपणा —

प्रिति स्पर्श तां खुबी निरिबी, कुबाईन में अके
कीमियागव कुर्ब आहे सोह लह पारसु पहनु ।

[प्रमके स्पर्शमे ही खुबी (मयल) मिट कर खुबाई (प्रभु रूप) बन जाती है। प्रेम सोहेके सिंग पारस है कीमियागर है।]

उपनिषद्के महावाक्यानुसार —

‘यतो वाचो निवर्तन्ते अग्राप्य मनसा सह

ब्रह्मि भी अनापते है —

सबे वाची न ब्रह्मि वाची, बरी वाची जिता बिरिजे
जो रोखनु पान तीहिये जान जो बन्वो बरी छा जो ?

[जिसे वाची वर्णन नहीं कर सकती बुद्धि जान नहीं सकती जो स्वयं प्रकाशित है उसके सिंग ज्ञानका प्रकाश क्यों ? तो फिर उसे कैसे जाना जा सकता है ?]

जान जातल तां पने ओ जाम अन जातल संदी,
मूह मेधोनिमें गए सिरि, सुति ताबाई अके ।

[अज्ञातना ज्ञान यदि ज्ञात द्वारा प्राप्त हो जाए, तो वह निरेसे नयनोंमें प्रकाश नभा जाए, और गुरानि उद्भूत हो उठे।]

अध बिठल से ओ नतीबनि तां बिठल अंदरि रिमां,
हूँव हूँवे में अठल अजबीत रासाई अके ।

[अज्ञानना यदि गीराम्यवश बुद्धिमें वर्णन हो जाए, तो अकस्म ही मेरे अन्दर अनेय नामन भा जाए।]

हे उमे और भी इन प्रमाण स्पष्ट करने है —

जो एता पारकोश में बाकी पड़े कना अंदरि बड़ा
मुक्ति का संसार जन्ममें सर्तु सरहाई जये ।

[यदि उस अक्षयका रूपमें ही दर्शन कर्के और विनाशमें ही अविनाशीका दर्शन या पाऊँ तो संसार-कारणमें मुक्ति द्वारा विनाश आनन्द आ जाए ।]

इससे प्रकट है कि जबकि अज्ञातकी ज्ञात द्वारा और निर्गुनकी समुदा
द्वारा ही प्रकाशमें लाना चाहते हैं । लेकिन इनकी निराकारकी साधना समुदा द्वारा
होते हुए भी आत्मीय पीढ़ामें न होकर पर पीढ़ामें निहित है ।

कीमती होरे कभीय का बाहि कतिरो कीमती
कूनु जो हर्मन्तु कूझिज सां पर पपर के बास्तिरे ।

[अमृत्य हीरेकी कनीसे वह खूनका कटारा बिछप मृत्युवाग है, जो दूसरेके
पसीने (कष्ट) के लिए गिराया जाता है।] फिर भी वह निष्फल नहीं
जाता —

बाक अरितीय तां विपल बूँद बहारी भी बरे,
पौं मये पंहिजो बिनो, पान लइ लइमत बनिबी ।

[पृथ्वीपरसे उठी हुई बाष्प आनन्ददायक बूँद बनकर लौटती है । अपने
हाथों ही हुई वस्तु अपने लिए नियामत (बैभव) बन जाती है ।]

इन्हीं द्वारा किस प्रकार प्रभु सीता रचता है अपना अनेकत्वमें एकत्व
तथा अन्य कई वेदान्त तथा तन्मयुक्तके विषयोंको लेकर बेबमि साईकी रचना
हुई है ।

'बेबमि'न अपने मुनकी साबनाओंकी बड़ ही सुन्दर इंगम अविम्वक्ति की है ।
उनके कला पद्य अथवा भाष पत्रके बारेमें इनका कहना ही पर्याप्त होगा कि उनकी
कविता कोई ऐसी होल नहीं है जिसपर मुखरनवाले लोग हकमें चोट करने जाएँ, फिर
उमम भले ही अमुन्दर और बाँध आबाज क्यों न निकलें । उनका काव्य आरवेस्ट्राके
समान है, जिसमें मितार बीन राहगाईं मुखम बादि कई भाजोंवा समारण रूता
है और जिसमेंसे सामञ्जस्यपूर्ण स्वर निनादित करनेके लिए बहुत ही बिज और खुर
बकारारकी आवश्यकता है ।

१. कदिरत बारा !

(गुह-तिलगु)

समु कनि तुंहिची सारह—कदिरत बारा !

निमसु कोतो नूव निमारा ।

कोटां कोटि बणायइ घरिर्युं-सहमैं सिज बड सारा कतियू,

जिनि जो मन्तु न पारा—कदिरत बारा ॥१॥

गुलमि अंबरि सुरहानि घरीं थो, मोरयुनि सां महिराथ मरीं थो

हीरा सारु हबारा—कदिरत बारा ॥२॥

मरहिं बणनि ते बाउ अचे थो—पन पन सां परिसाउ अचे थो

क्षिम क्षिम जा क्षिमिकारा—कदिरत बारा ॥३॥

तुंहिब धतुनि ऐं धीहनि कोली, बुसिबुसि कोयसि थोसे बोली

मोर मचमि नामियारा—कदिरत बारा ॥४॥

अजबु बणायइ बिजित्यु बाबल—बुनुं भरस भरस कनि घायसि,

वाजट कनि बसिकारा—कदिरत बारा ॥५॥

मुस्तु मिडियोई मग्वह आहे—मागो समजे अदरि आहे

बेहुनि मसि बुआरा—कदिरत बारा ॥६॥

सास अंबरि थो सामु क्षमे थो, 'बेबसि मनहदि नाबु धमे थो,

मीबस मीहं मळारा—कदिरत बारा ॥७॥

१ स्रष्टा !
● ● ●

(स्वर- गिरंग)

ओ स्रष्टा ! सब तुम्हारी प्रशस्ति कर रहे ह ।

ओ निमल ग्याति ! ओ प्रकाश द्रष्टा !

कोटि-कोटि सोनोंकी सुमन रचना की । ओ स्रष्टा ! तुमने सहस्रा सूर्य चन्द्र मन्त्र और यह उपजाये जिनका अन्त नहीं ह ॥१॥

सुमनोंमें सौरमण्डल मण्डार करत हा मोतियोंमें समुद्रको भर देते हो । उपजात हा, हजारों होने और काल ओ स्रष्टा ! ॥२॥

जब वृक्षोंपर समीरण बीड़ स्यासा है, तब पल-पलमें छम-छमकी प्रतिध्वनि उठती है ओ स्रष्टा ! ॥३॥

कीर कायल और बुलबुलान तुम्हारी प्रशंसामें चोंच खोल दी है । सुन्दर मयूर नाच रहे हैं ओ स्रष्टा ! ॥४॥

विचित्र विजली और मधोंका तूने निर्माण किया है । बूँदें वरस वरसकर टपक पहुँचा रही हैं बादल कड़क रहे ह ओ स्रष्टा ! ॥५॥

यह सारा विश्व ही मन्दिर है जिसमें आगा (स्वामी) प्रत्यक्ष हृदय में विराजमान है प्रत्यक्ष धारीरूपी मन्दिर बना हुआ है ओ स्रष्टा ! ॥६॥

दशमक अक्ष जो प्रदयाम उष्णवर्मित है वह अनहन्का नाद बज रहा है और बज रही है स्नह-सिक्त भरियाँ ओ स्रष्टा ! ॥७॥

३ तू

तू ई सिम में सोसिरो ऐं खंड में जाइणि तूं,
सूहें ऐं सोभ्या गुरुनि में, पुणि सुगंधि सुरहाणि तू ।

बाइरनि मां थो पसों बसाति बूझ बपी
तेनु विजसीम जो तज्जलो ऐं ककर काराणि तूं ॥१॥

छा पटापटि इंडलठि में जो बखे तुहिजो सकाउ,
सुबुह में किए सोन रंगो, फाम में गाइणि तूं ॥२॥

पुव करीं थो पाव सां पोसाव हिन ससार जो,
थो मिएह, तारा, सितारा ऐं अकुट नीलाणि तू ॥३॥

थो सुबी लहिबनि मयां, छोस्मुनि मयां छुसबो बतीं
समुडजी सक्ती बि तू, महिराजजी माठाणि तूं ॥४॥

तेसु तुहिजो बाउ, बाबूके, तिखे तूजान में,
हीर में हत्तिकाणि तूं, ऐं बाफ में आलाणि तू ॥५॥

माक मोस्मुनि हाव थो सीगाव सम्धीम जो करीं,
तूं जवाहिर में ससक सासनि अबरि आसाणि तू ॥६॥

ससु तो साहिब सबो आहे सिक्रति साराह जां
जासि छूस्मुनि जो बढामो ऐं गुणनिजी बाणि तूं ॥७॥

बिरह बेबसि । थो उये हर रूप मां तुंहिजो रंगी
ताणि तू मुंहिजो तसव खे पारि पहिजे भाणि तूं ॥८॥

३ तू
—•••

तू ही मूयमें प्रकाश हृत्-चन्द्रमाकी चम्प्रिका है ।

तू ही फूलामें सौरभ तथा सौन्दर्य है ।

तू ही मयोंकी घुँटें घनकर बरसता है । विद्युत्का तीव्र प्रकाश तू ही है और तू ही है मेघाकी श्यामरुता ॥१॥

इन्द्रधनुषमें रंग-विरंग आवरणोंमें तुम्हारा ही सौन्दर्य झलकता है तू उपाकी स्वर्णिम विभा है और सध्याकी रक्तिम छाया भी तू ही है ॥२॥

इस समारके पोलार (आकाश) की तू ही अपनेमें ओतप्रोत करता है । असंख्य तार ग्रह-नक्षत्र और मौल सध्या आभा तू ही है ॥३॥

तू ही लहरोंपर बोलायमान और उच्छलित है । समुद्रकी कठोरता भी तू है और महार्जवकी शान्ति भी तू ही है ॥४॥

वायु घात्याचक्र और तूफानमें तू ही तीव्रता है । समीरमें हलका पन भी तू है तथा बाष्पकी आद्रता भी तू ही है ॥५॥

हिम बिन्दुओंकी माला बनकर हरित पीछोंका शृङ्गार करने हो । तू ज्वाहरोंकी ज्योति और लालाकी लाली है ॥६॥

हे प्रभु ! तू अवर्णनीय तथा प्रगल्भ परे है । तू विशिष्ट निधि तथा गुणाका आगार है ॥७॥

हे नए रंग रचनवाले ! तू प्रत्येक रूपमें बिरह उत्पन्न होता है । अतः मरी उत्सुकताको आशपित कर भुल अपने निश्चय आ ॥८॥

४ होतु

आहे मशहूर आस्मि में, जफ़ा तुंहिबी, बफ़ा मुंहिबी,
हफ़ातल में मगरि आहे, वफ़ा तुंहिबी, जफ़ा मुंहिबी ।

हफ़ारे जवम रोशन सां, यचीं तारनि सितारनि सां,
तबह् भी बिलि कबूरत खां, न बी आहे सफ़ा मुंहिबी ॥१॥

निमकु तुंहिबी सबा जाई, निमिलि तुंहिबी न बिमां पाई,
जमल में माहि हीज जाई, सफ़ा तुंहिबी, फ़ता मुंहिबी ॥२॥

क्यों सोंगार सी साई, निलज लाइ होमु खिरिजाईनि,
न पर पेरो जन्वरि पाई, बिसी घटि बाहिना मुंहिबी ॥३॥

सिकारी शीहू ध्यो पैबा, लया सिर बेबबाननि जा
जपाया तो स भू मार्या, बमा तुंहिबी हफ़ा मुंहिबी ॥४॥

मुजनि में साफ़ बिसिरी ध्यो, बुजनि मे यादि मस मस ध्यो,
तबह् भी बाति बातर बिमें, तबइ, बी बेहमा मुंहिबी ॥५॥

कहा कहिणी घजो मुंहिबी, रहा रहिणी मगरि सधिनी,
यवाईम लइ बहिम बहिणी, थी 'बेबसि बासिना मुंहिबी ॥६॥

४ प्रियतम



सारे बिद्वजों तुम्हारी कठोरता और मेरी विद्वान्ता पात्रता प्रसिद्ध है लेकिन वास्तवमें सुगोलता तुम्हारी है और कठोरता मेरी ।

सहस्रों उद्भासित मनोसिंघों और नक्षत्रोंके रूपमें आते हो, फिर भी मेरा हृदय ईर्ष्या रहित नहीं हो सका है ॥१॥

सदा तुम्हारा नमक खानपर भी तुम्हारे निमित्त एक कौड़ी भी नहीं देता । संसारमें निद्वज्य हो तुम्हारी उदारता और मेरा अपराध प्रसिद्ध है ॥२॥

प्रियतम ! तुम्हें रिश्वानक लिए सैकड़ों प्रकारक शृङ्गार करते हैं लेकिन मेरी सासनाकी बमीके कारण तुम भीतर पाँव तक नहीं घरते हो ॥३॥

मेरे हृदयमें आलसका घोंक पैदा हुआ और मूक प्राणियाँ सर कटे । तुमन उपजाए और मन मारे । इससे तुम्हारी दया और मेरी हिंसा वृत्ति प्रकट होती है ॥४॥

सुन्नोंमें विस्मृत हो गए और कण्टोमें आकर याद आए, तथापि हे दाता ! तुम अजस्र दान दिए आते हो फिर भी मैं निर्लज्ज हूँ ॥५॥

वातें ता बड़ी मुन्दर-मुन्दर करता हूँ लेकिन मेरा माघार तथ्य रहित है । मेरी वासना अहंकार और धमके बशीभूत हो गई है ॥६॥



५. सावरमतीअ जो सन्तु

तू सितोइ हनुवात्सुमि येजिबाननि ओ जिबान,
तुहिजो कामोशी घताए तेसु सुछानी बयानु,
मुर्कमें तुहिजे समायल ससु बरिबी वास्तानु,
तुहिजे पेशानोअ मंशां सावितु सबाईम जो निशानु
पाण ते परिक्षा वठी पोह की जि कहिजीम सां कहों,
सो बबणु चाहीं न व्ये खे जो न खुबि रहिणीम एहीं ॥१॥

बीर जुबानी मबर में बर्य खे देबीअ जगियां,
छा न छा भेटा घरो तो शोक ऐ बडा मंशां,
बिलि, बिमापु ऐ बनु बघी, निहु जानि वाङ्गियइ चह सां,
मालु निस्क्रियत ऐ कुटबु परिचार मुस्की प्यार तां,
माबर्श मोबो अमुनु, हीरो हयस्तीम ओ रखो,
सूर सेजा तां वाहाबत जी मिठी माखी बखी ॥२॥

तो जवह वाखो गुलामीअ जे मुसियल तस्बीर खे,
कारिगरि जाती न की समिसेर या तक्रिरीर खे
माठि सां भेटणु भुयो तविबीर सां तक्रिबीर खे,
रमिज सां टोड़णु भुयो, हिम जुल्म जे बंजोर खे,
जोव जिस्मानी छब तो रानु बहानो सस्मो,
ऐ महिंसा जो नमों हपियाव हुरानी सत्यो ॥३॥

मगिरबो हुनिया रनी ये जगि जू सचित्पुं सह्यो,
नीह नपनि मां पह्यो य, कूनु जखमनि मां बह्यो,
जिनि जया बी जंगि ये पाई पटण सद् ये पह्यो
भोजितो माणाव ही कन ते अची तिमि जे रह्यो,
कामियाबीम साइ कीन्हे सूनु हारण जो जकव,
सेनु तोबनि सां मरण जो ऐ न मारण जो खरद ॥४॥

५. सावरमतीका सन्त

तुम कोटि-कोटि मूक भारतीयोंकी वाणी हो। तुम्हारी शान्ति तीव्र प्रभञ्जनका आगमन है। तुम्हारी मुसकराहटमें पीड़ित हृदयोंकी कथा समाई हुई है। तुम्हारे ललाटमें सत्यताके चिह्न प्रकटित हैं। अपने ऊपर प्रयोग करनेके बाद ही वाणीसे कुछ कहत हो। जिसपर स्वयं आचरण नहीं किया वह बात किसी अम्पसे कहना नहीं चाहते ॥१॥

हे बीर ! तुमने बलि-मन्त्रिणमें पीछा दबोके आगे धखा और प्रेमसे क्या-क्या भेंट नहीं रखी ! हृदय मस्तिष्क बल बुद्धि तन मन धन तथा कुटुम्ब परिवार आदिकी भेंट बढ़ाई। देश प्रेमकी बलि-वेणीपर क्या क्या म्यौछाकर नहीं किया ? अमूल्य जीवन-हीरकको आदर्श बनाकर घूम घूम्यासे बलिदानने मधु (सहृद) का आम्बादन किया ॥२॥

तुमने जब पराधीनताकी उलझी हुई तस्वीरकी परछाई की तब तुमने तमवार और भापण आदिको अनुपयुक्त समझा तब शान्तिक द्वारा ही भाम्यकी मुक्ति तथा धर्म द्वारा पलटना चाहा। तुमने इन अयामकी शृङ्खलाओंको चातुर्यपूर्ण मुक्तिसे तोड़ना चाहा। घारीरिक शक्तिका त्याग कर तुमने आत्मिक शक्तिका मार्ग प्रदर्शित किया और अहिंसाका आदर्शजनक नया अस्त्र बतलाया ॥३॥

जब पश्चिमके लोग युद्धके बरतार कारण चाहि चाहि कर उठ थे जिनकी भावोंमें मधु-घाग और घावोंसे खून टपक रहा था जो गुटबन्दी कर युद्धका आभूषण समझन करनेके लिए विचार विमर्श कर रहे थे अन्ततः उनका कानामें यह आवाज पहुँची— सफलता प्राप्ति के लिए न तो खून गिरानेकी आवश्यकता है और न तेज तोपोंमें मग्न और मारनेकी ॥४॥

५. सादरमतीअ जो सन्तु

तू किरोंहें हिबुबास्युनि बेजिवागनि जी जिवान,
तुहिनी कामोनी बताए तेषु सुकानी बयानु,
मुकुमें तुहिजे समायल ससुं बरिबी बास्तानु,
तुहिजे पेशानीम मेसां साबितु सचाईम जो मिशानु
पाण ते परिजा वठी पोह की बि कहिणीम सां कहीं,
तो चबनु चाहीं न म्ये खे जो न कृवि रहिणीम रहीं ॥१॥

वीर कुर्बानी महर में बरब खे देवीम अगियां,
छा न छा भेटा धरी तो शोक ऐं भया मसां,
बिलि, बिमागु ऐं बलु बघी जिबु जानि बाड़ियइ चाह सां,
माकु मिस्किमयत ऐं कुटबु परिवार मुस्की प्यार तां,
माबर्श मोबो अमुलु, हीरो हयसीम जो रबी
सूर सेजा तां शहाबत जी मिठी माकी घची ॥२॥

तो जहाँह जाओ गुलामीम खे मुंसियस तस्वीर खे,
कारिपरि जातो न की शमिधोर या तक्रिरीर खे
माठि सां भेटनु भुयो तविबीर सां तक्रिरीर खे,
रमिजु सां ठोड़णु भुयो हिन जुस्म खे जमोर खे,
जोव जिस्मानी छव तो राखु बहानी सस्यो,
ऐं अहिता जो ममों हयियाव हिरानी सस्यो ॥३॥

भगिरवी बुनिया रनी खे जगि जू सखित्युं सद्यो,
नौर मणनि मां पद्यो खे कूनु जखमनि मां बद्यो,
जिनि जमा यो जगि खे पाझां पटण सङ्ग ये पद्यो
भोचितो भाबायु ही कन ते मधी तिति जे रद्यो,
कामिपावीम काइ बीग्ह दूनु हारण जो अरद,
तेयु तोबगि सां मरण जो ऐं न मारण जो जरद ॥४॥

५. सावरमतीका सन्त

तुम कोटि-कोटि मूक भारतीयोंकी बाणी हो । तुम्हारी शान्ति तीव्र प्रभञ्जनका आगमन है । तुम्हारी भुसकराहटमें पीडित हृदयोंकी क्या समाई हुई है । तुम्हारे पलाटसे सत्यताके चिह्न प्रकटित हैं । अपन ऊपर प्रयोग करनेके बाद ही बाणीसे कुछ कहते हो । जिसपर स्वयं आचरण नहीं किया वह बात किसी अन्यसे कहना नहीं चाहते ॥१॥

हू बीर ! तुमने बलि-मन्विरमें पीड़ा दबीके आग थड़ा और प्रेमसे क्या-क्या भेंट नहीं रखी ! हृदय मस्तिष्क चल बुद्धि तन मन धन तथा कुटुम्ब परिवार, आत्मीकी भेंट बढ़ाई । देस प्रेमकी बलि-बचीपर क्या क्या न्यौछाबर नहीं किया ? अमूल्य जीवन-हीरकको आदत्त बनाकर, धूल धाम्यामे बलिवानके मधु (दाहद) का आस्वादन किया ॥२॥

तुमने जब पराधीनताकी उलझती हुई तस्वीरकी परख की तब तुमने सलवार और मापण आदिको अनुपयुक्त समझा तब शान्तिक द्वारा ही भाग्यका मुक्ति तथा धर्म द्वारा परलटना चाहा । तुमने इन अन्यायकी शृङ्खलाओंको चातुर्यपूर्ण मुक्तिसे तोड़ना चाहा । पारोरिक शक्तिका त्याग कर तुमने आत्मिक शक्तिकी मार्ग प्रदर्शित किया और अहिंसाका आश्चर्यजनक मया अस्त्र बतसाया ॥३॥

जब पश्चिमके लोग मुटके कण्ठाक कारण ब्राह्मि ब्रह्म —
ये जिनकी आंगाम अधु-धारा और भावोंमे गून गूँद गूँद र —
गुटबन्नी कर मुटका आमूल उमूसन करनक पिंग बिज — टि — ड —
ये अचानक उनके कानोंमें यह आवाज पहुँची — गूँद — गूँद —
म तो गून गिरानेकी आवश्यकता है और न गूँद — गूँद —
मारमकी । ' ॥४॥

कवि-धी माता

यो तके तुँहजे सहिरक ते मर्षा धाम्सो कमर,
तुँहजे हसबल ते फिरे धी फासि दुनिया जी नहर,
आहि आइबह ते हिम ई आजिमूरे जो भसर,
सोम तुँहजी सहकबड़ संसार फातरि कुंति बबर,
जगिजू फितिरत जो धियजो आहि जन मां प्रातिमो,
का बि साही कोन जगबी खून नाहिक जो तिमो ॥५॥

तुँहजे हिम्मत जे अगियां मुक्किल न पहुचणु कोहकाहु,
तुँहजो कामोनी तरीको कनिरेजीय जे खिसाहु,
तुँहजें पाते प्रेम ऐं पारेखिनी, इन्साहु साहु,
तुँहजे साम्युनि जी सफाई आहि शोजे कां बाकाहु,
चोट तुँहजो नाहि कहि नी फासि सां या आम सां,
यो लड़ी आला असूलनि ते तिरिस्ते काम सां ॥६॥

पहिजी आहुरि जो इशारो करि समासे घोर सां,
आहि ही तुँहजो इशारो फासि ऐंजी खोर सां,
जे हली यो हुकुम हेकर कहि मुकालिक तोर सां,
हिन्दु सामय ऐं हिमासमु टकिरबा गह तोर सां,
हिम इशारे जे बिसनि ध्युं अन्न अरपू छाहठि किरौड़,
हिम इशारे ते जजनि मोह सज छाहठि किरौड़ ॥७॥

जहिजे उहानो रूतिमें आहि 'खेबसि' साबिगी,
जहिजे पहिरे जे जमक मां आहि ताबां तासिगी,
जहिजे पसिन्नत में न कहि सज नकिरती माराखिगी,
आहि तंहि साबरमतीय जे सत्यजी मायाखिगी,
ताहु मायाबी घुरे भारतु वकणु तुँहजे हर्षा,
आहि हिन्दुस्तान जे अजु ताहु लागोटिये मर्षा ॥८॥

तुम्हारे द्वारा प्रवर्तित मान्योलनपर मूर्ख और चतुर टक्करी गाए हैं और तुम्हारी हलचलपर ससारकी बिशेष रूपसे दृष्टि गड़ी है। क्योंकि तुम्हारे इस प्रयागका प्रभाव भविष्यपर पड़नवाला है। तुम्हारी विजय हाँफने हुए समारक लिए घुम मूषना है। इसके द्वारा ही आमेरिक उपद्रवाका अन्त होनवाला है। कोई भी राष्ट्र अनामपूज खून-खराबीका उत्तरदायित्व नहीं रगा ॥५॥

तुम्हार उत्साहक आग कोहकाफ (एक पवत बिगप) पर पहुँचना स्थिति नहीं है। तुम्हारा शान्तिपूर्ण तरीका खून-खराबीक विरुद्ध है। तुम्हार पक्षमें प्रेम पवित्रता और न्याय हैं। तुम्हार साधिकाकी कार्यदमता कौनसे भी अधिक पारदर्शी है। तुम्हारा विराघ किसी आस (बिगप) अथवा आम (माघारण) में नहीं है। तुम उच्च आदर्शोंपर बैठकर न्यायपूर्ण पद्धतियोंसे लड़त हो ॥६॥

सोच-मसमकर ही अपनी रैंगलीस संकल करे क्यकि तुम्हार इगितके पीछे ईश्वरीय शक्ति है। यदि तुम्हारे इस इशारका आज्ञा किसीके विरोधमें चली गई तो फिर हिन्द सागर और हिमालय काही शोरक साथ टकरा उठेंगे। तुम्हारे इस सचेतकी आर आज छियासठ करोड़ आँखें उठी हुई हैं। इस इगितपर छियासठ कराड भुजाएँ उठ पड़ी होंगी ॥७॥

तुम्हारी रहम-सहनमें सादगी समाई हुई है। तुम्हारे चेहरेपर ताजगीकी भमर रौशन है जिसमें मानव जातिक लिए न घृणा है, न राप है। उस मानवमतीक सन्तकी ही यह स्वतन्त्रता है। भारत आज तुम्हारे ही हाथों स्वतन्त्रताका मुकुट पहनना चाहता है। आज भारतको रैंगलीबाएँपर बड़ा गर्व है ॥८॥

कवि-श्री मासा—

६ साहर

तो मैं हर बिलि जे टिकण साह समणु जाह खपे,
हर जमाने की गुना तो मैं बियण साह खपे,
जे मन्गी बिलि त गडण साह बि मोम्पाह खपे,
जोश तुँहजे सां हुअणु होअु बि हमिराहु खपे,
जहि जे तुनिको प्यो ह्यो तहि कोई बेतरि प्यो बनी,
जा सये गण न गने, अहिही तू गणगोत गनी ॥१॥

बोल बोलण भी लगे तो मां जिबानुनि जो बयां,
जे बयानीअ जे मिले तुँहजे बसीसे थो बयां,
गुपु इसिरार करी रंगजे पबे मां भयां,
आणी सागर जे थो सागर में, करी मूहमियां,
बोध-स्पश जे कसा जाति धियल कहिकी ?
जहिहा हरि जित्स बने साब पुरीसे कहिकी ॥२॥

पाण सां पर प्यो सयी, ताणु न पर पाणु सणी,
पँहजे एरनुनि जो या धुरिनुनि जो न कुअु माणु सणी,
साणु ससार जे घुरनि जो सबद साणु सणी,
कुअु बिलि बी प्यो क बीअ सां न मगरि जोग खणी,
आणि आर्य जे बेई जोति अगाई जग में,
रोशनी देह जे बी, जानि जसाए अग में ॥३॥

सहर बिजसोअ की तिलो पँहजे जा जजिबनि में मरी,
सहिहा हिक जाह तां हरि जाह जो फेसाउ करी,
जित्स मुवेह में बि हिक बारि मई जानि मरी,
हर सहिरक में जमा सोबे, अमा जे तू परी,
तुँहजो बोधाह ऐं वाणी ऐं कमु समु राफसो,
जाति मां जाति सहो तो मां बने मामु मसो ॥४॥

६ कवि



तुममें प्रत्यक्ष हृदयमें स्थित हानक लिए स्थान अपक्षित है और अपक्षित है प्रत्यक्ष युगकी भोग्य सामग्री आत्मसात् करनेकी शक्ति। यदि कोई हृदय ठाढ़ता है तो उसका मिलानक लिए मोमिया (मरहम) भी चाहिए, तुम्हारा आवरणके साथ सद्बुद्धिका समाधान भी अपक्षित है। तुम्हारा व्यंग भी स्पृहणीय है कठिनताम समझमें आनवाली बस्तुका भी ग्रहण करनेकी बुद्धि तुममें अपक्षित है ॥१॥

मूक व्यक्तियोंकी बाणी तुम्हारे द्वारा ही बालनी है। अवर्णनीयकी तुम्हारे द्वारा ही वर्णित हानका अवलम्ब मिलता है। गुप्त धमत्कारका पराक्षक पन्थ तुम्हीं प्रकट करने हो। सागरका गागर (प्यास) में भरकर सञ्जीवनी बना देना है। तुम्हारी बुद्धि-स्पर्शका लमी कौन-सी कला प्राप्त है जिसमें प्रत्यक्ष बस्तु मधुर बाधका तरह मद्धत है चटती है ॥२॥

परका अपन साथ सहन किया चलता है लक्षित अपनको लम्बा भूत जात है। अपनी लच्छात्रा और आवश्यक्ताओंका परिमाण तक साथ नहीं रत है। समारका वदनाओंका साथ-साथ स्थिर चलता है। बड़ी प्रसन्नताम हृदयक रक्तका उत्सर्ग करने है फिर भी तुम्हें उसका भान नहीं होता। स्वकीयता और अहंको आग लगाकर समारम उपाति अगाते है। पहले अपनी जान जलाकर समारम प्रकाशमें पूर्ण करने है ॥ ॥

विद्युत्तम भी बग पूर्ण तरह अपन भाषामें बगने है। उसका द्वारा एक है स्थानमें रुद्ध प्रसारण करने है। एक बार मृत प्राणीम भी नव-जीवनका मन्त्राकार करने है। प्रत्यक्ष आदर्शनमें युग तुम्हारी आर और तुम युगकी आर प्रयत्न हो। तुम्हारे भाव बाणी और धर्म सभी मद्धत है जब कि तुम मरतम दान (प्रणाम) लक्ष्य जनताका बस्याण करने है ॥४॥

अहिने कींह ओजि रसो तुहिने रहस्यो बुनिया
 कींह कलशि सो न जितां आहि कहण बी बुनिया,
 आहि अण बाळ, अचसु तुहिजे पहण जो बुनिया,
 कहि न वहिबार जे पाहुड में वहण बी बुनिया,
 राति जोषसि जो चिटी या कि जमासी कहिड़ी
 जारी मोरपुनि जे पुठयां सागो तलासी बहिरी ॥५॥

जाकि पेरनिजी फलफु तुहिजे धुमण साइ अचे,
 हीर हुयिकार भरी तोसां धुमण साइ अचे,
 मोव-सेजा ते अका तोसां सुम्हण साइ अचे,
 बजहु ऐ रक्खु सि 'यवसि' यो धुमण साइ अचे,
 बिभि जे परिपाल में सा मौज ऐ मस्तो न हुजे,
 ऊच चाइरजी जमाने में जे हस्ती न हुजे ॥६॥

तुम्हारे निवासका यह ससार उन्नतिकी उस पराकाष्ठाको पहुँच गया
जहाँस यह किसी भी आकर्षणसे निम्न गामी नहीं हो सकता । तुम्हारे
स्तरकी दुनिया अचस्रकी तरह अविचल हो गई है वह व्यवहारके किसी
भी प्रवाहमें प्रवाहित हानवाली नहीं है । पूर्णिमाकी चन्द्रिका पूर्ण अथवा
रमावस्याकी तम पूर्ण तमिस्रा ही क्यों न हो सेविनतुम गहरे समुद्रमें
ठँकर मोतियोंकी दाख जारी रखते हो ॥१॥

स्वर्ग भी तुम्हारा पञ्च-रज भुमनके लिए आता है । सौरभ पूर्ण
उमीरण तुम्हारे साथ विचरण करनेके लिए आता है । मृत्यु शय्यापर
प्रसरता तुम्हारे साथ सानका आती है । चाह नुर्य हो चाहे
समाधि दोनों ही तुम्हारे साथ भुमनका आती हैं । हृदय सागरमें वह
आनन्द बीर मस्ती ही न आती यदि युगमें महाकविका अस्तित्व
न हाता ॥६॥

७ गदी विलि

करि बुनिया में बिलि बबेरी-तू बि रहु मां भी रहा,
 भाषि मज-बूतीअ में फेरो-तू बि रहु मां भी रहा,
 अण भवावत खां न भाहे, शाहिसयत में जाइ बे,
 बिलि बे कहि हमिबब भाङ्गे में मला थोरो त बे,
 तुंहिनी मुंहिनी करि मकेरी, तू बि रहु मां भी रहा ॥१॥

गरिबे हमि बतनी न माहीं, बेस वासी थी गुवादि,
 बेस वासीअ खां बबो, बुनिया वासी थी निहादि,
 घरि नगर पुहती पकेरी, तू बि रहु मां भी रहा ॥२॥

तगि मजहब में न भावूं, कौमियत में जाइ बे,
 भाइपीम, इस्तानियत, कहानियत में जाइ बे,
 छवि दुईम जो बोब मेरी-तू बि रहु मां भी रहा ॥३॥

पहिजे शाही महिल मां, घटि बे कदं हिक कोठिड़ी,
 बे असे मू जहिङ्गे सइ, पबबी ठही ली मूपिड़ी
 करि तमन्ना घटि तिखेरी, तू बि रहु मां भी रहा ॥४॥

तुंहिजे बस्तर हवान तां जकी बज्जे मक्रिराहु थो,
 बासक्रियूसीअ बे हयां जेकी बिमे बरिबाहु थो,
 तौंहिजे करि चौकति बडैरी-तू बि रहु मां भी रहा ॥५॥

इशिरती प्याले मां तुंहिजे बूद जे हिकिड़ी बबे,
 हुंद बाजा अन्न जा थो कूत गरिबा में अचे,
 विण बचति बकत भलेरी-तू बि रहु मां भी रहा ॥६॥

बाग अशिरत तुंहिजे मां जे पुर कडनि जा बचनि,
 बे भित्पुनि भूगनि भित्पुनि जा हुंद थी सोड़ा पवनि,
 समुस रछु सालिमु सचेरी-तू बि रहु मां भी रहा ॥७॥

मुस्क गोरीअ थी हवसि ? हिम पेट घिस्ता बे समे ।
 बूनु हारण थी इच्छा ? बेबसि सम्पत्ता बे समे ।
 रोखु रोगन में अघेरी । तू बि रहु मां भी रहा ॥८॥

ॐ विनाल हृदय

ससारमें रहकर अपने हृदयको बिनाल बनाओ । तुम भी रहा और मैं भी रहूँ । अपनी मनावृत्तिमें परिवर्तन लाओ—तुम भी रहा मैं भी रहूँ ।

यदि कौटुम्बिक सम्बन्ध न होनेके कारण तुम्हारे व्यक्तिगत जीवनमें स्थान नहीं, तो भी सहानुभूतिपूर्ण हृदयके किसी कोनेमें थोड़ा (स्थान) तो दे दो । 'तेरी' और 'मेरी'को कुछ सीमित कर 'तुम' भी रहो, 'मैं' भी रहूँ ॥१॥

यदि प्राप्तवासी नहीं हो, तो भला दखवासी बनकर रहा । देशवासीसे बढ़कर विद्वत्वासीका दृष्टिकोण धारण करा । अपनी दृष्टिको दृढ़ और विद्वत्वास-पूर्ण बनाओ । 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ । ॥२॥

तंग मजहबोंमें सीमित न हो जाओ । राष्ट्रीयताका स्थान दो, प्रातृत्व, मानवता तथा आत्मिकताको स्थान दो । द्वैत भावनाको मलिन दृष्टिका त्याग करो । 'तुम' भी रहा 'मैं' भी रहूँ ॥३॥

यदि अपन बिनाल प्राप्तदमें एक काठरी भी खाली कर दोगे, तो वह घर जैसा निराश्रितके लिए एक शोपड़ी बन जाएगी । अतः अपनी तीव्र सृष्ट्याको जरा सीमित करो । 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ । ॥४॥

तुम्हारे भोजनक चीन्हेसे जो व्यय चला जाता है अपव्ययके कारण जो कुछ बरबाद होता है उसपर ठीकस चौकसी रखा । 'तुम' भी रहा, 'मैं' भी रहूँ । ॥५॥

तुम्हारे बिलामी व्यालेम यदि एक बूँद भी गप रह जाए तो वह अनाजक दाने बनकर किसी गरीबको खाद्य सामग्री बन जाएँगे । यह बचत सुन्दर बरतान बन जाएगी । 'तुम' भी रहा मैं भी रहूँ ॥६॥

तुम्हारे वैभव और बिनास पूर्ण बगीचस यदि बीट और झटकार हो बच जाएँ तो ब बिना दीवारोंको झोंपड़ियोंक मिए पर बन जाएँगे । अतः अपनी समझ मनुष्यमित्र और सच्ची रखो । 'तुम' भी रहा 'मैं' भी रहूँ ॥७॥

सर्गोंका हड़प करमकी सृष्ट्या ! जब पेटकी चिन्ता सता रही है रक्त पातकी चिन्ता ! अम्यताक युगमें ! प्रकाश पूर्ण दिनमें यह अंधरा ! ! 'तुम' भी रहा 'मैं' भी रहूँ । ॥८॥

८ इन्सान

ये हुने चाति खे हा पाणु छिपाइण जो कियासु,
 कीन हरगिख हा करे तोखे बनाइण जो कियासु ।
 कह तुंहिजे खे करे मूर मां किअ हा पवा,
 ये हुने खेसि न हा भेद बनाइण जो कियासु ॥१॥
 शिकलि आईने मां तुंहिजे बी रघोदड़ बी वखे,
 माहे ही पाणु बिना पाण पसाइण जो कियासु ॥२॥
 बी मुमवव ये जर्वाहि जोति मसां मसा वधी,
 हो तर्वाहि धाकि में कुरणीव समाइण जो कियासु ॥३॥
 तो में यबवा जर्वाहि प्रेम भरी बिलि ये भरी
 हो तर्वाहि धार करे खेसि भिलाइण जो कियासु ॥४॥
 इवक धारां न हुने बिलि से हुकुमत कहिजी,
 हो न ताकत सां को कुबिरत खे बवाइण जो कियासु ॥५॥
 तुंहिजे रबिमा ते रस्यो हुन ये छा ऐन जमासु,
 जोड़ तुंहिजे ते उभ्यो प्रिति पचाइण जो कियासु ॥६॥
 बरम हस्तीअ खे मिली रगति ऐं रीनक तोबां,
 तोते बी मौजि रस्यो रय रवाइण जो कियासु ॥७॥
 सारी मझसूऊ जे माझिरमें तो इन्सान अघो,
 साझु साबितु कयो सरताज सवाइण जो कियासु ॥८॥
 माहि संसारमें इन्सान । जगलो तोबां,
 तोखे बी माहि मसा पाणु मन्हाइण जो कियासु । ॥९॥
 का बि मावो न मटव माहि जे 'जेवसि' न बगो,
 माहि बुमियामें अगरि धूम मचाइण जो कियासु ॥१०॥

मानव

यदि परब्रह्मको अपन आपको अप्रकट रखनेका ही विचार होता, तो वह बदापि तुम्हें निर्मित करनेका विचार ही नहीं करता !

तुम्हारी आत्माको अपने प्रकाशसे वह क्यों उत्पन्न करता यदि उसे अपना रहस्य खोलनेका विचार न होता । ॥१॥

तुम्हारे ही वर्णनसे स्रष्टाका रूप मुखरित हो रहा है तो क्या इससे अपने आपको प्रकट करनेका उसका विचार नहीं सम्भवता ? ॥२॥

जब उसकी ज्योतिसे मानव बुद्धि प्रकाशित हो उठी तब सूर्यका विचार रज-कर्मोंमें समानेका था । ॥३॥

प्रभुने जब तुममें प्रभुपूर्ण हृदय भर दिया तब तुम्हें विन्मिश्र कर अपने आपमें समानेका विचार था । ॥४॥

प्रणयके सिवाय किसीका भी हृदयपर शासन नहीं चल सकता । इसमें शक्ति द्वारा प्रकृतिको दमन करनेका विचार न था । ॥५॥

तुम्हारे निर्माणसे सौन्दर्य परकाष्ठापर पहुँच गया । स्रष्टाका तुम्हारी सृष्टि द्वारा ही प्रेमको परिपक्वावस्थामें पहुँचानेका विचार था ॥६॥

तुम्हारे द्वारा ही इस सृष्टिको शान-शोक और ओजस्विता प्राप्त हुई है और तुम्हारे द्वारा ही (सीसामयकी) सीसा रखनेका विचार उभर उठा ॥७॥

ऐ मानव ! सारी सृष्टिके अन्तमें तुमने उत्पन्न होकर मुकुट-मणि होनेका विचार प्रमाणित कर दिया ॥८॥

ऐ मानव ! तुमसे ही इस ससारमें आत्मिक उद्भासित भसा कभी तुम्हें अपनेको सफल समानेका विचार आया ! ॥९॥

यदि तुम्हारा विचार ससारमें घूम मगानका है तो कोई भी साधा तुम्हारे सामने टिक नहीं सकती, यदि तुम अपनेको 'बेबस' (एकार) न बना दो ॥१०॥

१. पोढ़धतु

धो कणें मां केल आणे तुंहिजे साखी हयु शरीरु,
 दस्तकारीअ में बिलापव आहि ओ । हुमिरी हरीरु
 धरंती बाबुनि सां तुंहिजे खोब ओ पाए धईरु,
 धो पले रत ते रही ऐं खून ते तुंहिजे खरीरु,
 खरि सराइत मां उपाए पाप ओ बे खरि रही,
 बेगिरहि बेगिरि बही ऐं बे समय बे धव रहौं ॥१॥

बाअ बाबूने न ओह्यो तुंहिजे कोही जानि खे,
 वे बिम्बा काइव करण भी कोन बमु वृक्षन खे
 नाहि सरिबियुनि आं सिपायों तो अखबु इम्तान खे,
 ओ सधे कोरे न गरिम्पुनि ओ असव ईमान खे
 भक्ति पयव ठिर्मबो रहे या बब फुड़ी बसबो रहे,
 महु मयारि हसंबो रहे, हब हाज में गसबो रहे ॥२॥

धी पतंगु ओ जानि साडे समइ बाहुबार ते,
 कुरि रही मांओ तो मांवी मीन मुड़ीबार ते,
 गुल घरे बेबिलि ते भेटा, कुरि रहौं कुरि फार ते,
 तोले बेसुरितीअ रसायो आहि हासति बार ते,
 तुंहिजी महिअत बे अजर ते आहि पिपल बेपाकी बलि,
 कहि रक्खी तोये मुकलु ऐं पाप खे सामो अवलि ॥३॥

भाउ ! बिमुओतिय नखर सां खोलि हिम हयबी तरी,
 जहि सवो संसारमें कंहिबी न अकताई सरी,
 किअं न आहे बटत बे बहिरि निघाननि सां मरी,
 मास, धन, इअत ते आहे सोभ सोभ उमजी तरसरी
 उयु, उयी जानू भयारि सां घरि मसीबनि ते नखर
 जा बगल, पुरव-पछम में आहि पोढ़धतजी पखर ॥४॥

९. श्रमिक



ओ मनदूर ! तुम्हारा यह पवित्र दायीं हाथ मनो कनस पैदा करता है । हे वीर ! तुम्हारी इन प्रसादपूर्ण भुजाओंसे ही वलहीन शक्ति प्राप्त करता है, तुम्हारे ही रक्तस रबी खरीफका पोषण होता है । इस खती-बारीसे खूब धन उत्पन्न करनेपर भी तुम निर्धन ही रहते हो । तुम बेगारमें पिसते हो और निराश्रित होकर घेघर घने हो । ॥१॥

तुम्हारे इस सौह कार्यको वायु तथा बवण्डर विचलित नहीं कर सके । तुम्हें कायर और उवासीन बनानेका तूफानमें दम नहीं है हे विचित्र प्राणी गिनिर और हमस्तकी ठिठुरन तुम्हें कम्पित नहीं कर सकती और न भीषण शोष्ण ही तुम्हारे विदवासको ढिगा सकता है । भले ही पसीनस तर क्या न हो जामो अबका भूसलाघार वर्षा होती रहे, फिर भी तुम्हारा मुख हँसता ही रहता है और शरीर धमसे घिसता रहता है ॥२॥

पतंग बनकर साहूकार रुपी दामापर तुमने अपनेको जला डाला । स्वयं दुखी रहकर तुमने पूजोपतिके लिए आनन्द उपजाया । तुम हृदय-हीनपर फूलोंकी भेंट चढ़ाकर स्वयं काँटोंपर ही प्रसन्न रहते हो । अज्ञानने ही तुम्हें इस अन्यायपूर्ण अवस्थामें डाल लिया है । तुम्हारे परिश्रम रुपी पेढपर मत्मानाशोकी बेलने अधिकार कर लिया है जिसने तुम्हारा शोषण किया और स्वयं हरी भरी बनी रही । ॥३॥

इस दाएँ हाथकी हथेली खालकर अपनी आँखोंसे ज्योतिष दखो किमक बिना इस मसारमें किमीका भी निर्वाह नहीं हो सकता किस प्रकार यह सीनाम्यपूर्ण चिह्नोंमें सुगामित है । और देखो कि वैभव धन और सम्मान पर उमने विजय प्राप्त कर ली है । उठा और ठठकर ज्ञान-पूर्ण दृष्टिमें अपने धाम्यपर दृष्टिपात करो । आज पूब और पश्चिमके प्रत्येक स्थानमें श्रमिककी ही चर्चा है । ॥४॥

१० हाव हारी !

तुहिजे तस्वीर मंशा जोम जो कुम्पाउ बजे
 तुंहिजे क्रूरियाव मां वेबादि जो बर्ताउ बजे
 तुंहिजे बदिहस्त मंशा आम जो ईसाउ बजे,
 माठि तुंहिजे मां घसबिनाकु यो घोराउ बजे,
 जानि निदु पोंहबी जकाउनि में पधारे गारी,
 तबि बिसावद धी अज्ना बिसि न तो हारी, हारी ! ॥१॥

धी उमो ऊँयो तो रोंबनि में कई चेस्ति कुबी,
 पेर पाथीम में दुबिया, जानि पसीने में दुबी,
 जिबगी तुंहिजी गिसाउत सपादुनि में सुबी,
 जिस्म छे साक़ु करण साह न साबुजी सुबी,
 मूखी मर्यनि में पई मीत जो सबसो धी शिकाव,
 ध्यो सक्रोभीम जे सबबि तो में बजाउनि सह धिखाव । ॥२॥

तो बिना पोछे घन्ना, पर न खया इत कना,
 जे रंदा न रमण जा ते बर्बया सइतु चप्पा,
 तुंहिजे गुंभियुनि में पिङ्गण साह चप्पाई हा घप्पा,
 मालु प्राजी ध्यो, रह्या बाकी तुहनि जा कै कप्पा,
 अंहिजे रत सापु रबी, कून सां पसिजे धो खरीझु
 हाइ । बेक़तु रहे पाण सो हुमिरी ऐ हरोझु । ॥३॥

पहुच तुंहिजे धां जमीराव सबा माहि परे,
 बोट बगरि जे समे यादि बदेरो जो करे,
 छोट उत बरित सबसि तोलां सबाइ धी न सरे
 रमु टिपाइण सह सेयो तोलं बिसासमि सां मरे,
 पहिजी तावत जो जरो भाणु न हारी सोछे,
 क्रम पासीं धो, हजनि जाण न हारी तोये ! ॥४॥

१०. हाथ किसान !

तुम्हार आइतिसे तुमपर जाति द्वारा किया हुआ अन्याय झलक रहा है। तुम्हारी फरियावस तुमपर किया हुआ अन्यायपूर्ण वर्तन झलक रहा है। तुम्हारी बुद्धिसे आम लोग द्वारा तुम्हें दिया हुआ कष्ट झलक रहा है। तुम्हारी चुप्पीम भयानक आवाज उठ रही है। तुमने अपना तन तथा जीवन परिधममें पिघलाकर गला दिया तब भी हिम्मत रखकर किसान ! तुमने अपना मन नहीं भसोसा ॥१॥

तुमने सीधे खड खर और झुककर रापनमें अपनी कमर टकी कर दी। तुम्हारा पाँव पानीमें डूबे और गरीब पत्नीनास तर हो गया। तुम्हारा जीवन गन्दगीकी चपटें खाता रहा। गरीबकी स्वच्छ रस्मनके लिए तुम्हें साबुन तक नहीं प्राप्त हुआ। भयानक बीमारियोंसे घिरकर तुम्हें मौतका भिकार बनना पड़ा। गरीबीके कारण तुम दवाइयोंकी भी भिकारन लगे ॥२॥

बो-बोकर तुमने बहुतोंकी अमाज दिया लेकिन अपने पापमक लिए तुम पूरा बाना भी मुरखित न रख सके। तुम्हें कठोर बने ही पवान पड़। तुम्हारे खसिहानोंमें बसनेक लिए बहुत लोग म माल तो साफ हा गया और तुम्हारे लिए भूखी और छिन्नक ही बचे। जिसक रक्तसे रबी और खरीफका पोषण होता है। अफसोस वह परिधमी बिना जानका ही रह जाता है। ॥३॥

जमींदार तुम्हारी पहुँचम बहुत दूर है लेकिन मोट और बेगारके समय वह तुम्हें घुब याद करता है। क्याकि उस समय तुम्हारे बिना उसका काम नहीं चल सकता। अपना काम निकालनेक लिए वह तुम्हें तरह-तरहकी ग्लामाएँ देता है। ह किसान ! तुम्हें अपनी गन्तिका किम्बिन् भी बाध नहीं है। तुम अपने कृतव्यथा पासन ता करते हो लेकिन तुम्हें अपने अधिकारोंका भान तक नहीं है ॥४॥

घोष ऊरहि जो बिनहि पेट में प्रकाशु बसे,
 सरलु बर सोख, जो सुक्रान जो इमकानु बसे,
 बरु, हव पहिजी लघे, क्यु ताका जो जो पसे,
 जाति 'बेवसि' ते गम्भीर वस्तु जो कुबिरत जो रसे,
 तो लह आकास भरा पर्वत वादल या अचनि,
 सहिर जो मीठु कपो पर्वत वादल या अचनि । (१५॥

घोर अघकारके अन्त करणमें ही तो प्रकाश बन्द रहता है । हवाके रुक जानेपर जब सुस्त गरमी पड़ती है तो तूफानका अन्वधा रहता है । दुःख अपनी सीमापार करनेपर ही स्वाम्भ्यका रूप दखता है । नितान्त बेवस अथवा निरुपायकी सहायताके लिये ही कुदरतका सहायक हाथ पहुँचता है । तुम्हारे लिए आकाशमें गरजते हुए बादल आ रहे हैं दयाकी कृष्टि लिए गरजते हुए बादल आ रहे हैं ॥५॥

११ किसे इतिहास ?

एकता का बेविता ! तुंहिजो सही मन्दर किसे ?
जहिमें इतिहासो उगालो माहि सो अरु किसे ?
हरिहरि प्यो बाबुसा तो बिनु उमेदुनि जो जहास,
आस आवासीस सह आहे बढकी बेवस किसे ? ॥१॥

प्यो मची तूफानु खिड़ी, समुंदु छोसी मार प्यो,
किमं मिलनि मस्तक जा मोती, क्षान्ति-यर सामर किसे ? ॥२॥

किजं छसाबी कूनु बेंबो ज्ञोमियत जे कलब मां,
नम्र ते नदतर किसे दारियान से खंजर किसे ? ॥३॥

समुझ सात्किह ते तमीखी ऐं बिमापी चोट से,
जो पुनी पठुचे बंगण सह सोभ जो अमिगर किसे ? ॥४॥

अघ जा खोपा चकपा खुबि गर्ज जमनि जे मचां,
किअ मला हबो नदर में "पर किसे ऐं घर किसे ? ॥५॥

महिब दाहाणा फिरनि या मत्तिसची महिबर जते,
माहि अछिप्यारीम जे बाकनि में बाईम बर किसे ? ॥६॥

जहि मां गुडिरी आम जो आसुविगीम में प्ये गुदर,
दिसिनिवासीम जो जहान में सो बयासू बर किसे ? ॥७॥

मासु खबेबाज तुंहिजो या तकनि आकास तां,
सेयु बुंहिबुनि मां खबनि प्या "मलि त विदुबे मर किसे ? ॥८॥

बरतो तासीर मुहिबत सां करे जो सोहु, जरि,
प्रिति जो पारसु पहणु सो कुज जीम्यागद किसे ? ॥९॥

जो मिसाए मुफरनि छे भुर्बयी मसाप में,
सो हुबमल वतनीम जो 'बेवसि जखिबो ऐं ओहब किसे ? ॥१०॥

११ सकता कहीं ?

हे एकपक्षे देव ! भैतुम्हार मन्दिर कहीं पाऊँ ?
वह हृदय कहीं है जिसक अन्दर एकपक्षा प्रकाश है ?

ते साहस ! तुम्हार बिना आशाओंका जहाज भटक गया है ।
स्वतन्त्रताके लिए आशाएँ ली उठ रही हूँ लेकिन संगर डालनेके लिये
बन्दरगाह कहीं है ? ॥१॥

बड़े ही जोरका सूफान उठा है समुद्रकी लहरें उछल रही हैं । लेकिन
उद्देश्यके मोटी बसे प्राप्त हो सकते हैं क्योंकि शान्तिपूर्ण सागरकहीं है ? ॥२॥

राष्ट्रीयताके मरारसे यह विपाकन रक्त कैसे दूर होगा ?
क्योंकि नरज और नाबिवाके लिये मस्तर कहीं है ? ॥३॥

धुड़ बुड़ि सञ्चरित्रता और भस्तिष्ककी उदात्ततापर भी
काम कपी अजगर हाकी हा जाता है ॥४॥

स्वार्थी भाँखोंपर अन्नकारका परदा पड़ गया है फिर भला अपना
और परया क्योंकर दृष्टि गाबर हो ! ॥५॥

स्वार्थकी घुरीपर राष्ट्रोंकी सन्धिर्षा भी पलट रही हैं । अधिकारके
शोर-गुलक सामन बचनकी टक कहीं ? ॥६॥

बिसमे जनताकी आजीविकाका मुखपूर्वक निर्वाह हो सके,
मनप्रमादका मझारमें ऐसा कृपा पूर्ण द्वार कहीं है ? ॥७॥

आकाशम पजबाल तुम्हारे मांसपर आँखें गहाय बैठ हैं । अपनी
सेज चोंचाम कह रहे हैं कहीं सङ्ग-भङ्गने भस्मे ही मर जाया । ' ॥८॥

अपनी प्रमादपूर्ण मैत्री प्रभावमे जो साहवा खाना बनाता है । प्रेमका
वह पागम पम्बर और प्रमका वह रामायनिक (कीमियागर) कहीं है ? ॥९॥

जो मनकत्वमें एकदम स्थापित करे वह स्वयं प्रेमका जजवा
और जोहर कहीं है ? ॥१०॥

१२ स्त्री

जाति पहिरत छे अथी जो चौहूँ प्यो इतिहार जो,
हुस्न हिरिताइण लइ पहिर्यो पाष प्योसो मारि जो ।

पुष्प प्रहृती ठही जाती सिक्कलीअ भाँ विषा,
प्यो समासो तुतु जारो बीद ऐँ बीबार जो ॥१॥

धो मसोमी हीर जारो मुहिबती मुखिइधूँ टिइधूँ,
बस्न जो बाँगे बर्यो प्यो सिससिसो ससार जो ॥२॥

पल्लिनी प्यो पिलि जो पीयो जियाबहूँ हिक तरकि,
प्यो छजानो मनु खमानो इअर जो इतिहार जो ॥३॥

सूह जो सोने मय्ये नें मम जो मोती जइयो,
कमु निखाकतबाद धी प्यो बस्न जे बीसार जो ॥४॥

प्यो मुआसिक मुहिनु जारो खोर जो ऐँ खारि जो,
मामिसो मुहिकलु मधी प्यो सोम जो ऐँ हार जो ॥५॥

हिक नखर जे कोट केर्या कोट मगिती ज्ञान जा,
खोर कम जमन दाँ ब्याबहूँ हुस्न जे हयियार जो ॥६॥

बहि नखर जी बाहि मड़िको, प्यो सत्या सागर धुली,
हिक सहिरं साँ लुङ्ग लणो, प्यो ताड बसि बहिकार जो ॥७॥

जोतिनी पुनि प्यो चितोरो कोटु जो मय जीतु हो,
पर सत्या जे कोट पविमणि धे न प्यो बिगु बार जो ॥८॥

छा मँबाईम जे मजासि आहूँ छपर अलि जो छणे,
ताबु बिजिसोअ धाँ ब्याबहूँ तेज जे तलिवारि जो ॥९॥

हरीअ जे गुप्तु जखिबनिमें घणो अन्हो मसर,
यो कटे बिसी जे सिरअ माँ मोतो नितु बीबार जो ॥१०॥

१२. स्त्री

जब ब्रह्माको अपने आपको प्रकट करनेकी साहसा उत्पन्न हुई तब सौन्दर्य से दुमानेके के लिए उसने स्त्री वषा धारण किया ।

निराकार और साकारके सम्मिलनसे पुरुष और प्रकृतिका प्रादुर्भाव हुआ, जिससे क्षीप्त ही द्रष्टा और दृश्यका समारम्भ आरम्भ हो गया ॥१॥

प्राची से मरुभूमिक के बहने से प्रसिद्ध मुकुल मुकुलित हो उठे । संयोगकी विजय हुई और ससारका समारम्भ हुआ ॥२॥

प्रेम का पलड़ा एक ओर विषय रूप से झुका और नारी हृदय प्रेम के चमत्कार की मिथि बन गया ॥३॥

सौन्दर्य के स्वर्णाभूषण में लज्जास्पी मौक्तिक विजडित हुआ और संयोगके मौक्तिक-वेधनका कार्य विधेय रूपसे निरंतर उठा ॥४॥

वल और अम्यायका विरोधी सघर्ष आरम्भ हो गया जिससे विजय और पराजयका व्यापार कठोर हो उठा ॥५॥

दृष्टिके एक ही आघातसे भक्ति और ज्ञान के प्राचीर का पतन हुआ । सौन्दर्य के अस्त्र की शक्ति धर्मन-धर्म से भी शक्तिशालिनी सिद्ध हुई ॥६॥

जब पाप-दृष्टि की आग भड़की तो सतीत्वका सागर आलोकित हो उठा । एक ही झटकेसे घोर धान्त हो गया और धान्त हो गई पापीकी प्जाला भी ॥७॥

यद्यपि भित्तौरका अजेय दुर्ग विजित हो गया फिर भी पद्मिनी के सतीत्व के दुगका बाल तक भी बाँधा न हुआ ॥८॥

पाप पूरा वासनाकी हस्ती ही क्या कि जो सतीपर आँख तक उठा सके । सती के तेज अभी पृथ्वी का प्रकाश बिजली से भी अधिक है ॥९॥

नारी की गुप्त भावनाएँ बड़ी आश्चर्यनी होती हैं । वह अपने हृदय-शुक्तिस नित्य नए मोती उपजाती है ॥१०॥

- १० बेह जा रोशनु बिया भी पाग मां पिरियटु करे,
 ११ धो मंघारो गुमु करे अत्तान जे अधिकार जो ॥११॥
- प्रेम-जल जलस मयां निर्मल कवल जो गुलु रहे,
 बिलि भिनस मां बासु बिये नितु हुम्ब जे हुम्बिकार जो ॥१२॥
- गर्मबन्सी यर्ममें धारे पत्तीम जी मूरिती,
 बिभु पिता सां जो निसे अकसिरि मुहाडो बार जो ॥१३॥
- रुब सां रुबान यहमें जानि जो धोयो धुमे,
 सस मयो जगजो जीअणु 'बेबसि' सब उपकार जो ॥१४॥
-

वह अपने भीतरसे ससारके प्रकाशमान दीप-स्तम्भ प्रकट करती है और अज्ञानके अन्धकारका विनाश करती है ॥११॥

उज्ज्वल प्रेम-अलक ऊपर निर्मल कमलका वास रहता है। उसका सहानु-भूतिपूर्ण कोमल हृदय प्रेमकी सुगंधसे ससारको सुवासित करता है ॥१२॥

गर्भविस्थामें गर्भमें वह पतिकी ही प्रेमपूष्प प्रतिमा धारण करती है, जिससे प्रायः पुत्रका रूप पिताके सदृश ही हुआ करता है ॥१३॥

वह प्रेमकी बलि बेदीपर अपने आपको प्रेमपूर्वक न्यीछावर करती हुई बिचरण करती है 'वेबसि' कहते हैं कि उसका नित्य उपकारपूर्ण जीवन यद्यस्वी है ॥१४॥

१३ शाहूकार

सासु प्यो तुंहिजो बुझासो, कहिजे कोह छाणि मां,
बनु बिलि कहिजो बखे यो, तुंहिजे गिल गाढ़ाणि मां,
आहि तरि बामने अशिरत कहिजे अखि मांसाणि मां,
सासु राहत जो बने यो कहिजे तन्तुनि ताप मां,
कहं कयो तो भरमबे बे मुफ्त बाळ मांसाद ?
आहि सा गांठिल गुरीबो, शर्म बामत जो शिफाय ॥१॥

किम न रत-बूसे जीर बे कोहु प्यो साईं सबे,
बनु खेच जो करे बरिबी बिल्युं खासी छबे,
बनु मे सुखीं सां बनु हीप्पुनि हड्डिमुनि चारो गर्बे,
शोण महंमं बहिर बू यो रिचयती राजो खबे,
आहि पत्थर बिलि जो शाहिबु-ऊर्बु पत्थर जाइ जो,
सोयु सुर सुर में समायसु सईं सुर ने वाज जो ॥२॥

तमअ हक हड्डिपु सबबि, बगासु कियुइ ऐं कनिबाव
तुंहिजे मसुवाड़ी मुहिबत, बे उपाया बेबु भार,
काहिणी अगिरत जे आवत सां बपायुइ हर बिकार,
तुंहिजे टहिर्कनि ते हजारे बडम बाहिनि अरक बार,
मिमं बप्प्यो वनु, मासु बतिबो दानु शाहूकार जो,
तिमं बप्प्यो बुनिया में बाइस बार जे भाजार जो ॥३॥

फूस फल सां छलिकंदड बिसु पप्प्यो होअ पेढ पाल,
जिति बने पछिड़ी, पजी, उति छोटि बे कहिड़ी मजाल,
सोखीं शायबि उप्प्यो मुन्किल-मुजारे जो गुबार,
तुंहिजे एदि गठोअ बई जीबति जोमण एबजि जेबास,
सोइ पं बधि छोइ छे सोइो कयो तो सोइ सां,
सिर सटिपइ सहसं सकोमो, घुरिअ सोही सोइि सां ॥४॥

१३ धनपान

तुम्हारा यह लाख रुपेटा किसके खूनसे सुन्दर बना है ? तुम्हारे लाख गालोंकी झालीसे किसके हृदयका खून प्रकट हो रहा है ? किसकी आँखोंकी आँदोंसासे तुम्हारे इस वैभवका पल्ला छर है ? किसकी सौतोंके तननेसे तुम्हारा यह आनन्दपूर्ण साज बन रहा है ? ऐ मुफ्तखोर ! तुम जैसे नर मक्खो (सहृद) को किसने वैभवशाली बनाया ? वह है अबोध विपन्नता जो लज्जा और विपत्तिका शिकार बनी हुई है ॥१॥

आश्चर्य है कि इस 'रक्त घूसनेवाली जोंकको स्वामी' के नामसे सम्बोधित किया जाता है यह वह है जो दुःखपूर्ण हृदयोंका खून घूसकर खाली कर देता है। यह रिववत कमी राज खूनकी झालीसे कमजोर हृदयोंका खून मिलाकर नगरके नए-नए क्षीण महल निर्मित कर रहा है। उन्हीं बने हुए प्रासादोंके पत्थर उसके पापाण हृदय होनेकी साक्षी दे रहे हैं और साक्षी दे रही हैं प्रत्येक स्वरमें समायी हुई ठण्डी आहें ॥२॥

सबहारा बृत्तिके कारण तुमने गरीबोंको कगाल और भ्रूणी बना दिया। तुम्हारी इस मकान किराये की मुहब्बतने बच्चोंको घघर और निराश्रित बना दिया। इन्द्रिय भोगोंके सुख लनकी आदतसे तुमने कई विकार बढ़ा दिए, तुम्हारे इन ठहानोंके कारण हजारों आँखें मधु पून हैं ज्यों-ज्यों धनवानका धन माल पद और धान-शोकल आदि बढ़े त्यो-त्यो ससारमें वे अत्याय पूर्ण कष्टोंके कारण बन गए ॥३॥

फ्ला-फूलोंस झड़ी उबर पुति करानवाली इस पृथ्वीको देखो, जहाँ एक बीजसे खजूरका पड़ पेदा हो जाता है वहाँ कमी की क्या मजाल ! तुम्हारे कारण ही शायद आजीविताकी समस्या कठिन हो गई है। तुम्हारे ही स्वार्थने जीवन निर्वाह बठोर कर दिया है। आवश्यकतासे अधिक संग्रहकी इच्छासे तुमने लोगोंको तंग कर दिया है और आवश्यकता रूपी सोहेनी छड़ तुमने हजारों गरीबोंके सर पर दे मारी है ॥४॥

कर्मयोगी भी न तो कृदि कर्म भी कृदिरत बिठी,
 धियस पकाबट खां न वेसाहों बठी, फरहत बिठी,
 किम बसर बुझ में मिठा भाणे न सा मसत बिठी,
 तंबुस्तीम खे न सासिमु निड जी नइमत बिठी,
 जे रसे मसबुद बेवसि कहि बबेरे राज ते,
 हूब पहिये पुरि उत्तराखंड ते सोखे छबे ॥५॥

कर्मयोगी बनकर तुमने कभी कर्मकी कृपा ही न देखी और परिश्रमके कारण हुई थकावटसे आराम लेकर, तुमने कभी आनन्द ही नहीं लिया। किस प्रकार भूखमें प्याज भी मीठी लगती है इसका रसास्वाद ही नहीं लिया और न कभी स्वास्थ्यकी गहरी निद्राका मजा ही चखा ॥५॥

१४ हमिसवुं गोढो

अधामक उषो बिसि मंहरि भारिसू
 “न धार्यां धंधर में धियां रुबक
 कयमि बहू यां धारिसू बुस्तजू,
 समे राहिवर या कि पूरनु गुरु
 सची राह रोसनु सचे जो ससे,
 हुदुरीअ में पूंछे बठी जो हसे ॥१॥

इलाए रक्यो झोले-बिलि हरिबररि,
 रहे यी मंहर में इहाई पचर,
 न आई कियो भी खमी खुशि खबर
 निहारुंमि धनो की न आयो नबर,
 बुधण सह धनो मू कया कन बड़ा,
 मगरि कीहु बि सखी न पहुती सदा ॥२॥

जटाधारी जोगी अधामकि पबियो
 इसारे सां ओरे सिधो बहि सखियो,
 कयाई बिना योग धारो न ध्यो,
 सिधनु योगु तांहते बकरी पियो,
 धना सास धारे बिठमि योग में,
 मगरि मनु हो साध्यो बिषय भोगमें ॥३॥

धरी ब्रह्मानो भिसो सगु ध्यो,
 कयाई बिना ज्ञान रस्तो न ध्यो”,
 उगहीअ छां बि सतिज्ञानु सिधिणो पियो,
 रहनु ज्ञान में रातिबोहां पियो,
 उगहीअ राहमे पुनि न राहत मिली
 सगी बध में बा कया जी किसी ॥४॥

३४ सत्तानुमूतिपूर्ण अश्रु-पिन्धु

अकस्मात् मेरे हृदयमें यह इच्छा प्रकट हुई — 'बिरोध असमजसमें न पड़कर प्रियतमक सम्मुख जाऊँ ।' अतः बड़ी उत्कण्ठासे मैं चारों ओर खोज की कि मुझे कोई पथ प्रदर्शक अथवा सच्चा गुरु मिल जाए जो मुझे प्रकाश पूर्ण सत्य भाग दिखा सक और मुझे मेरे प्रियतमक चरणोंमें उपस्थित कर सके ॥१॥

हृदयकी मेरी इस उत्कण्ठाने मुझे दरबंद कर दिया । हृदयमें यही साहसा बनी हुई है । मने बहुत वृद्धा, देखा लेकिन कुछ दिखाई न पड़ा और कहींसे भी यह सुसमाचार प्राप्त नहीं हुआ । सुननेके लिए मैंने अपने कानोंको खूब सतर्क किया लेकिन मेरे बुझानेपर भी यहीसे आवाज नहीं आई ॥२॥

अचानक एक जटाधारी साधु मिल गया जिसने इशारेसे मुझ अपनी ओर बुलाया और कहा कि योगके सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं है । अतः योग सीखना मेरे लिए आवश्यक हो गया । बहुत वर्षों तक मैंने योगकी साधनाएँ कीं लेकिन मन फिर भी विषयोंमें ही रमा रहा ॥३॥

फिर कहीम एक ब्रह्मज्ञानी सन्त मिल गया । उसने कहा — 'ज्ञानके सिवा अन्य मार्ग नहीं है ।' उससे भी मने सद्मानकी दीक्षा ली और रात दिन ज्ञान चर्चामें ही बिताने लगा । मनुष्याका उपदेग पाकर भी मुझ उस मार्गमें आनन्द प्राप्त नहीं हुआ ॥४॥

बरी, कर्मकाण्डी बियो को मिसी,
 जयाइ "जिया बुद्धि खपे भी निसी,
 तकड़ि मां बियुसि तीर्यनि ते दिसी
 क्युमि बानु, इइनानु, जपु तपु विसी,
 वर्यो कोन बितर्नि ऐ संताप मां,
 छुटी बीन जिहु, हाइ बिसापि मां । ॥१॥

बरी लोक मां व्युसि भगत बटि हसी,
 जयाइ त 'भगिनी सभिमिमें मसी',
 बह्य पोइ त भगिनीम में बिलि थे जसी,
 मगरि राह पुरी न भगिनीम सकी,
 करे बाहुं बर्यो ज्युमि "छा कर्मा ?'
 धका हीम वज्जी कीहुमे बर ते धर्या ? ॥२॥

अचानक मूं हिहु सूर-मुदिको बुधो,
 बुधन सां हमिबहु गोड़ो गयो,
 जहो बाब जो हो रसो हिहु कुड़ो
 समायलु कुड़े में सजो समुंडु हो !
 उगहीम समुंडमें "वाणु मुँहजो बरो !
 गगन में बियो गुप्पु पूबर-गुरो । ॥३॥

संघे बडु हब लां त वे जुरि बबा,
 बुबो कुलमें पी क्रमा बिये बक्रा
 मिसे मांड, तो में त वे इप्तहा,
 रहे भी न मां ऐ न भंसा मुबमा,
 बज्जे मास 'बेबसि' निपटु नासु भी
 लुदी बेसुदीम में करे वासु भी ॥४॥

फिर एक कर्मकाण्डीसे परिचय हुआ उसने कहा—“कवच मुद्रा क्रिया अथवा कर्मकाण्डकी आवश्यकता है।” धीमे ही मैं तीस यात्राके लिए निकल पड़ा। वहाँ पहुँच कर जप तप ध्यान स्नान तथा प्रेम-पूर्वक ज्ञान भी किया, लेकिन शर्तों और प्रायश्चित्तसे भी कुछ सिद्ध न हुआ और संसारकी हाय-हायसे जान नहीं छूटी ॥१॥

फिर बड़े ही प्रेमसे एक भक्तके पास गया। उसने कहा—‘भक्ति ही सबसे उत्तम है। ज्यों भक्तिमें अपन हृदयको रमाता रहा सेबिन भक्तिने भी पूरा मार्ग-दर्शन नहीं किया। तब दुःखपूर्ण निःश्वास लेकर कहना पड़ा अब क्या कहे? यह ध्वजा मैं किसके दरवाजेपर जाकर गाड़ूँ ॥६॥

अज्ञानक भने किसीकी कण्ट पूरा कराह मुनी-मुनते ही एक सहानुभूति-पूर्ण अधु बिन्दु झलक आया। यद्यपि वह एक पानीकी ही बूँद थी, लेकिन उसमें समाया हुआ था मारा समुद्र! उस समुद्रमें मरा ‘महम्’ डूब गया और यह दुःख-पूर्ण गुड़िया गगनमें समा गई ॥७॥

जब दुःख सीमाको पार कर जाता है तो वही औपधि बन जाता है। ध्यष्टि समष्टिमें समा (फना) कर ही शाद्वत बनता है। जब ‘मैं’ तू’ में समा जाना है तब मि-मीमता आ जाती है तब ममत्व और वासनाएँ समाप्त हो जाती हैं और आत्माका निराकरण होकर ‘महम्’, ब्रह्म’ में लीन हो जाता है ॥८॥

१५ आजाविगी

बाबरो कंजनि मंसां तुंहिजो गुबद-आजाविगी ।
 तो बसायो सछतु सो प्रोसाहु घद-आजाविगी ।
 जंहिजे टोडण सह छये जाँठो जिगिद-आजाविगी ।
 कंहि मुसीबत जो न बिये कंहिते असद-आजाविगी ।
 मस्तु भी तुंहिजे मयां इम्सानु ध्ये यो बेडपो
 जो बणी परिवानो बे यो तेहु आतलि में डपो ॥१॥

रातिसयत भी गुप्पु राबतो तो बिना निकिरे मपी,
 फाटु खाई जिबगी, इम्सान भी मिसिरे मपी,
 रोगिनाई रहजी ठबहि मसां उमिरे मपी,
 कौमियत नाकारिगद भी कंहि तरहि सुधिरे मपी
 पाण ते माङ्गु ऐ जुहारीम जो यो बुनु नासु बिये,
 आरिमक उमतीम संबो, हिक प्राति गुनु यो नासु बिये ॥२॥

बनु इम्पलु निर्घटु घुटघलु, तो बिनु बकर बसाट माहि
 रानिधानी रमिठ सां इम्साऊ जो जङ्ग काटि माहि,
 बाब सां बे बाब भी येसी अशाबत बाट माहि,
 टिमिकबड़, फड़ि फड़ि बड़, बे जोति जीबत साट माहि,
 बाब छां बबिडी धर्यो यो, बड़ु बिसि रंजूर में,
 जठमु बिसि जाहिद पिये यो, नेठि सो नासुर में ॥३॥

बूद मां बुखंडी जये यो बाहि सां भड़िचो हपी
 जा जलाए जानि छे जखिबात जू बिगिणू हपी,
 जिमं मुसासिऊ बाउ छटिक, जिमं बरे तेखो पपी
 कीन ठापुर बिये, यमे जेतीं न रहिमत भी कपी
 साठिमी नातो रहे हिन बाहि सां बसाति जो,
 जिमं भंघारीम सां तइसहु मा सहार्इम राति जो ॥४॥

१५. स्वतन्त्रता

हे स्वतन्त्रते ! बबूसक काँटोंमेंसे होकर तुम्हारा मार्ग गया ह ।
हे स्वतन्त्रते ! तुमने बग़ीचा पर बसाया है जिसकी तोड़नेके लिए मजबूत
हथियार चाहिए जिसपर किसीका भी प्रभाव न हो सके । मनुष्य तुम्हारे
ऊपर मुग्ध होकर निर्भय बन जाता है और पतंग बनकर सीधे ज्वाला में
कूब पड़ता है ॥१॥

तुम्हारे बिना व्यक्तित्वकी गुप्त शक्ति प्रकटित नहीं होती
मानव जीवन प्रस्फुटित होकर निःसृत नहीं होता अँधेरेसे निकलकर
आत्मिक ज्योति प्रज्वलित नहीं होती और तुम्हारे बिना राष्ट्रीयता
असफल होकर सुधरती नहीं । तुम्हारे बिना स्वावलम्बनका बीज ही
नष्ट हो जाता है और आत्मिक उन्नतिका गुण विधेय भी नष्ट हो
जाता है ॥२॥

तुम्हारे बिना बकरेकी तरह दम और गला घुटता रहता है तथा
राजनैतिक चतुरताके कारण न्यायकी जड़ ही कट जाती है । तुम्हारे
बिना न्यायके साथ अस्यायका सम्बन्ध निकट हो जाता है और तुम्हारे
बिना जीवन टिमटिमाती और फड़फड़ाती ली के समान है । दमनसे पीड़ित
होकर हृदयकी पीड़ा दब जाती है और वह हृदयका भाव एक निः
नामूरके रूपमें प्रकट होता है ॥३॥

जब स्वतन्त्रताकी अग्नि बड़े वेगसे भभक उठती है तो भावनाओंकी
पिनगारियोंसे धरीरको झुलस देती है । ज्यों-ज्यों विरोधी वायु बसती
है त्यों-त्यों वह तेज जलने लगती है । जबतक कृपा-वृष्टि नहीं होती
तब तक वह (अग्नि) धान्त नहीं होती । इस अग्निसु चारिषका सम्बन्ध
उचित ही रहता है जिस प्रकार अग्निधारसे चन्द्रिकापूर्ण रात्रिका ॥४॥

योदि माता मे मित्यल बातारबो जा बाति माहि,
 ऐं जम्म ते जहिजे लह हुकिवार इन्सान जाति माहि,
 जहिजा बघि संसारमे सुखद न का सोपति माहि,
 तंहिजे नितु रोने रखधु बेबसि न कंहिजो बाति माहि
 अहं कारा क्रोश ते ईदा मयद मुक्तिकी छणो,
 बर वारीम बाहे ते कूदि बाहु माणीबो धणी ॥५॥

माताकी गोदसे ही जो वरदान प्रभु द्वारा प्राप्त है और जो मनुष्यका जन्म सिद्ध अधिकार है जिसस बढ़कर ससारमें और कोई दूसरा उपहार नहीं उसको सदाके लिए रोक रखना किसीके बशकी बात नहीं है अर्थात् (स्वर्गके) देवता गुह्य सहायता लेकर पृथ्वी (पृथ्वी) पर पहुँचेंगे और दुःख-युक्त आहपर स्वयं भगवान न्याय करसाएँगे ॥५॥

१६ पूजा मन्दरु

- मुंहिजो मखर बि उते बर्य सरो मिति बेरो,
 बर्य जहि जाइ किये, मुंहिजो उतेई केरो,
 छिहु मारे मां पिठीम निड मां अघ राति उषां,
 डोरी उति जस्तु पुजां बर्य जो जहि जाइ पेरो । ॥१॥
- बे ही ह्व मासु बि कमि आम जे किञ्चित्तमें अजे,
 छोन कोरे ऐ कये मास बिद्यां खोफेरो । ॥२॥
- सोय जे जाह ततल खां जा जसप बिसि न सने,
 ध्यो शर्तु उनजो पहिण खां न करो सरिसेरो । ॥३॥
- पापु आकाशमें दोबा जे उबायां जहिजो,
 मिसिमि अगका न लखे मुंहिजो किधे आखेरो । ॥४॥
- तबइ हमिरव जो एरो त जुशाबो पिङ्गु पिये
 जहिजो हरिजाइ पिये मकङ्गु न मगरि किबि येरो ॥५॥
- साबिगी साजु, सबाईय सां ए 'बेवति' बिमिके ।
 बिसि कंयसु कीहि बि मबाईय सां न पिये शल मेरो । ॥६॥

१६ पूजा-मन्दिर

मेरा मन्दिर भी वहीं है जहाँ पीड़ाका निवास है। जहाँ-जहाँ दुःख विद्यमान है, वहाँ-वहाँ मैं विचरता हूँ।

अब रात्रि को अचानक मीठी नींद से जगकर चौककर मैं वहाँ पहुँच जाऊँ जहाँ पीड़ाने अपने पाँव जमाए हैं ॥१॥

यदि यह मेरा मांस और अस्त्रियाँ जनता की सेवा के काम आएँ तो क्यों न मैं उन्हें काटकर उनपर न्यूँछावर कर दूँ ! ॥२॥

दुःखपूर्व, सन्तप्त कराहसे जो हृदय जल नहीं उठता, उसमें और परमरमें किंचित् मात्र भी अन्तर नहीं है ॥३॥

मैं सेवाक आकाशमें इतनी ऊँची उड़ान लूँ कि 'अनाका' (पक्षी विशेष जो पृथ्वीपर नहीं बैठता।) की तरह मेरा कहीं थोँसला ही न मिले ॥४॥

सहानुभूतिपूर्ण हृदयका इतना विशाल क्षेत्र बन जाए कि उसका केन्द्र सर्वत्र हो और आधिकारिकता कहीं न हो ॥५॥

ऐ 'बेबसि', सावगी, सच्चाईसे कमक उठ, जिससे हृदय-कमल किसी भी घुरी भावनासे मलिन न हो ॥६॥

१७ गरीयनि जी झूपिडी

जा आहि जाइबाद न बसें बबाला खां,
 चीही न खेरिबारि जा गिरिबी अजे ह्यास खां,
 ओमो न जहिजे आहिजे जोजे जबास खां,
 हस्को रहे जा हियांभ ते सवसो संधास खां,
 जेहि मे एकरे खरि न सरासरि सचे मिडी,
 मत्ता ! झुरे न शास गरीयनि जी झूपिडी ॥१॥

जा बड वज्रो बी बीख कीह नातिकु मळीस खां
 माजी रहे जा ऊबु-गुबारे जे रसुनि खां,
 पुनि बी पनाहमे रहे-हासिब हरीस खां
 घारे न कासि खीफु को जूनी खयोस खां,
 जे कुळं ऐं कडे रहे सोधी सडुकिडी,
 मत्ता ! झुरे न शास गरीयनि जी झूपिडी ॥२॥

छांगे छना अविपाळ जो सामुनि स्थानि मत्ता,
 साबो मत्तो तिटपाळ पुराणनि पखनि मत्ता,
 काढो कळपाळ बडिब जे नामनि बखनि मत्ता,
 पोडियो पिठपाळ पाण ऐं सरितनि सखनि मत्ता
 मुपती मबर त आया मची मुदिस थी मिडी,
 मत्ता ! झुरे न शास गरीयनि जी झूपिडी ॥३॥

जेहिने म मरग सास त को माडु थो रहे,
 राटो, डखणु, न जेहिने को सोहाय थो वहे
 जूने, पयर या सिर जो न सिरि बारु जा सहे,
 'महिमूसु जाइ गाह जे हेठा न जा गहे,
 ममुबाइ जे मुहारजी आहे न जा पिडी
 मत्ता ! झुरे न शास गरीयनि जी झूपिडी ॥४॥

१७ गरीबोंकी सोपडी

जो पायदाद अथवा किसीकी संपत्ति हानिमें रहित है, जो गिरवी भी नहीं रखी जा सकती जा किसी अनिष्टकी भावनामें भी मुक्त है, जो रक्षाके विचारमें हमारे हृदयके लिए भाग्यशून्य नहीं है और जिसमें धन-वैभवका परे भी प्रविष्ट नहीं हो सकता है प्रभु! ऐसी गरीबोंकी सोपडीकी आज तक न सगे ॥१॥

जो बामल और मुकुल बम्बुओंसे दूर भागती है जा वैभव-पूज आजीविताके प्रलोभनोंमें मुक्त है जा ईर्ष्या और ईपस रहित है, जिस किसी शूनी और दुखचारीका भय नहीं और जो ताल आदिमें रहित होनेपर भी सुरक्षित है ह प्रभु! ऐसी गरीबोंकी सोपडीका आज तक न सगे ॥२॥

छाटी-छाटी टहनियाँका काटकर छाटा-भा घर बनाया गया है, घास-फूस और तिनकों द्वारा साधारण आश्रय बनाया गया है, जिसके निर्माणमें स्वयं उन्होंने और उनके मित्रोंपर परिश्रम किया है और बिना कोई मूल्य लिए मित्रान दोन-श्रीद्वारा सहायता की है ह प्रभु! ऐसी गरीबोंकी सोपडीका आज तक न सगे ॥ ॥

जिसपर न ता नका साज ही इतराता है और न राज वकई अपना झुहार ही जिसपर परिश्रम करता है परन्तु, इट अथवा शूनका भार जा जिसपर नहीं उठानी और जागृह-कर (House Tax) के भारसे पीड़ित नहीं है जा बमुरख्त विरायतारक किगयेम रवी हुई नहीं है, ह प्रभु! ऐसी गरीबोंकी सोपडीका आज तक न सगे ॥४॥

सिन्धु बहू वास थो बिसे बहिजे विष्णुनि मंसा,
 तिरिकयो मजनि वा तिरिबिरा तारनि कर्युनि मंसा,
 भुषिका कबी मजे हुवा बहिजे मिरयुनि मंसा,
 छिगिदाह मीठु थो करे छुठिकी छिरयुनि मंसा
 ज्वरित संबी कमास, सिंहल काइ सुमिड़ी,
 यसा ! मुरे म वाक परीबनि जी, सुपिड़ी ॥५॥

जिसके विचारोंस सूर्य और चन्द्रमा झाँकते हैं और यह नक्षत्रोंकी किरणें फिसलकर भीतर आती हैं जिसकी धीवारोंसे वायु समसनाती हुई दौड़ती है वर्षा जिसकी छतोंसे घुसकर छिड़काव करती है, जो स्वास्थ्यके लिए सुन्दर भेंट है, हे प्रभु ! गरीबोंकी ऐसी शोपड़ीको आज तक न समे ॥५॥

जिसमें ज्वार अथवा बाजरेकी स्वादिष्ट रोटीमें ही आनन्द माना जाता है और जिसमें सादा जीवन व्यतीत करनेके कारण किसी बड़े हकीमकी जरूरत नहीं पड़ती। परिश्रम उनको धीर्यायु बना देता है। उनकी आनन्दोन्मत्ततापर तृष्णा अधिकार नहीं करती, जहाँ चिन्ताकी ध्वनि मनुष्यको नहीं जलाती, हे प्रभु ! ऐसी गरीबोंकी शोपड़ीको आज तक न समे ॥६॥

१८ नवार्ध



तुंहिनी बुनिया में नवाईम जो सदा आहे जगाम,
जोहजे सटिके ते रहे भोगमें हरि बिलि जो मघनु,
साफ़ सवसी थी गुजर साइ सगे राह कठनु,
प्यो नवाईम ऐ जक्रा सां बि नियय साई जतनु,
महिनी बुनिया खा जिते मोस जो माफ़ जो वजे
ये नवाई न हुये हुं ब हजी हरि को भजे ॥१॥

हुस्न जो माहीं जमाने में तूं जबिरो हबियाव,
तुंहिजे हस्तीम ते रहे सूरह जे हस्तीम जो नबाव,
रूपजे राग अग्या माहीं सुरीसी तु सतार,
हर निजारे जी मजर नूरे नवाईम रे निकार,
जे न हरि दा ते हजी छाप नवाई पहिनी,
हुस्न जोखे में बिते हुं ब नवाई पहिनी ॥२॥

जो सवाईम ते नवाईम जो जबाहि रंमु चढ़े,
सोन मुबीम में तबाहि गोया जो हरीरो जो जढ़े,
मादि हुनुव सी जो नमूने में मझो घातु चढ़े,
नी जिबानीम में मगरि पत पुराई पढ़े,
प्यो पुराणप ते नवाईम जो जबाहि बेसु बगो,
परिचे भूजो हो गुबो, एबू सी महिबूब सगो ॥३॥

हेचि अज माहि जहो काहू हुई अबिरत जहिजे,
इस्म हो बाम्ह, जबनि अज वा जहालत जहिजे
ऐबु शायदि प्ये मुभा, अज जो निबाकत जहिजे
सा जिये बीब न तब्बोस जो माबत जहिजे,
गरिचे क़ुबि याति हबीकीम में फेरो जो अचे,
फ़रू तयि कप सवाईम में जमेरो जो अचे ॥४॥

१८ नवीनता

तुम्हारे समारमें सदा नवीनताका समाराह छाया हुआ है जिसका साक्षित्यस प्रत्येक हृदय आनन्दमें मग्न रहता है। इस ससारमें शुद्ध और सरलतापूर्वक जीवन-निर्वाह कठिन हो गया है। जिसमें जीनेके लिए कठोरता पुनः यत्न किया जा रहे हैं जहाँ प्रति क्षण मृत्युका मारु बाजा बज रहा है ऐसे ससारमें यदि नवीनता न होती तो प्रत्येक व्यक्ति दुखी हो जाता ॥१॥

समारमें सौन्दर्यका तू ही जबरदस्त सम्य है। तुम्हारे अस्तित्वपर ही सौन्दर्यका अस्तित्व अवलम्बित है। रूप और रंगके भागे तुम ही मुरीली बीणा हो क्योंकि प्रत्येक दृश्यकी सुन्दरता नवीनताके प्रकाशके सिवा निकम्मी है। ओ नवीनते ! यदि तुम प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं लगाती तो सौन्दर्य अपन महत्त्वको भी विपत्तिमें पड़ा हुआ देखता ॥२॥

जब सत्यपर नवीनताका रंग चढ़ता है उस समय मानो स्वर्ग मुद्रामें कोई हीरा जड़ दता है। क्या वही है जो ममूनेमें नई गठन गढ़ के लेकिन नवीन वाणीमें भी प्राचीनताका पाठ पढ़ाए। प्राचीनतापर जब नवीनताका आवरण चढ़ता है तब वह गुड़िया पुरानी हानपर भी बड़ी प्यारी लगती है ॥३॥

आज वही निस्तार है, जिसपर कस आश्चर्य प्रकट किया जा रहा था ! जा बन्ध तब ज्ञान समझा जाता था आज वही अज्ञान माना जा रहा है कस पापद वही दोष माना जाए, आज जिसे मुकुमारता प्राप्त है। वह बन्धु ही कहाँ है जिसमें परिवर्तन-शीलता न हो ? यद्यपि स्वयं जात हकीकती (बह) में कोई परिवर्तन नहीं होता फिर भी सिफ़रती (साकार) अवस्थामें उमक रूपमें बड़ा परिवर्तन हा जाता है ॥४॥

१८ नवार्द्ध



तुंहिनी बुनिया में नवाईम जो सदा माहे जशनु,
 बंहिजे सटिके ते रहे भोजमें हरि बिसि धी मधनु,
 साफु सबसी धी गुस्सर साइ सगे राह कठनु,
 प्यो जवाईम ऐं चक्रा सो बि बियप्य साई जतनु,
 महिदी बुनिया धो बिते भोत जो माक धो धजे
 से नवाई न हुजे हुंइ हजी हरि को मजे ॥१॥

हुस्न जो माहीं जमाने में तूं जबिरो हविषाध,
 तुंहिजे हस्तीम ते रहे सूह जे हस्तीम जो नबाध,
 रुपजे राग भग्यां माहीं सुरीसी तू सतार
 हर निजारे जी मजर मूरे नवाईम रे निकार,
 जे न हरि दा ते हजी छाप नवाई पहिजी
 हुस्न जोखे में बिते हुंइ नवाई पहिजी ॥२॥

धो सचाईम ते नवाईम जो जबाहि रगु जड़े,
 सोन मुडीम में तबाहि गोया को हौरो धो जड़े,
 भावि हुमुख सो जो नमूने में नमों धादु धड़े,
 भी बिबानीज में मगरि पत पुराई पड़े,
 प्यो पुराणप ते नवाईम जो जबाहि धेसु वगो,
 गरिधे भूनी हो गुहो, पूरु सो महिबूध सगो ॥३॥

हचि मज माहि उहो कस्तह हुई मबिरत बंहिधे,
 इस्मु हो कालह, जजनि मज धा जहास्त जंहिधे
 ऐवु शायबि प्ये सुमा, मज धो निजानत जंहिधे
 सा बिधे बीज, न तखील जी माबत जंहिधे,
 गरिधे पूरि जाति हजीलीम में फेरो धो मधे,
 फर्रु तयि रुप सफाईम में शसरो धो मधे ॥४॥

१८ नवीनता

तुम्हारे ससारमें सबा नवीनताका समारोह छाया हुआ है जिसके साक्षित्यसे प्रत्येक हृदय आमन्दमें मग्न रहता है। इस ससारमें गूढ़ और सरलतापूर्वक जीवन-निर्वाह कठिन हो गया है। जिसमें जीनेके लिए कठोरता पूर्ण यत्न किये जा रहे हैं जहाँ प्रति क्षण मृत्युका मारू बाजा बज रहा है ऐसे ससारमें यदि नवीनता न होती तो प्रत्येक व्यक्ति दुखी हो जाता ॥१॥

ससारमें सौन्दर्यका तू ही जबरदस्त छस्त्र है। तुम्हारे अस्तित्वपर ही सौन्दर्यका अस्तित्व अवलम्बित है। रूप और रणके आगे तुम ही सुरीली वीणा हो क्योंकि प्रत्येक दृश्यकी सुन्दरता नवीनताके प्रकाशक सिवा निकम्मी है। ओ नवीनते ! यदि तुम प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं लगाती, तो सौन्दर्य अपने महत्वको भी विपत्तिमें पड़ा हुआ देखता ॥२॥

जब सत्यपर नवीनताका रंग चढ़ता है उस समय मानो स्वर्ण मुद्रामें कोई हीरा जड़ देता है। कला बही है जो नमूनेमें नई गठन गढ़ दे सकिन नवीन बाणोंमें भी प्राचीनताका पाठ पढ़ाए। प्राचीनतापर जब नवीनताका आवरण चढ़ता है तब वह गुड़िया पुरानी हानेपर भी बड़ी प्यारी लगती है ॥३॥

आज वही निस्सार है, जिसपर कल आश्चर्य प्रकट किया जा रहा था ! जो कल तक ज्ञान समझा जाता था आज वही अज्ञान माना जा रहा है, कल गायब वही दोष माना जाए, आज जिसे मूक्युमारता प्राप्त है। वह वस्तु ही कहाँ है जिसमें परिवर्तनशीलता न हो ? यद्यपि स्वयं ज्ञात हवींजी (ब्रह्म) में कोई परिवर्तन नहीं होता फिर भी सिफाती (साधार) अवस्थामें उसका रूपमें बड़ा परिवर्तन हो जाता है ॥४॥

१९. गोठनि जो सुधारो

भारत में नए रंग जो आणोंबो निहारो, गोठनि जो सुधारो ।
 हिन बेरा जो ठाहींबो नमूनाइ नियारो—गोठनि जो सुधारो ।
 मन्दादु वरो कस्तूरी जो गोठनि में बसे थो—बसयनिमें बसे थो
 भाणोंबो भसी सेकिड़ो आबममें उबारो—गोठनि जो सुधारो ॥१॥
 उमिड़पा जे हुनिर हिन्दु जा—धन्या जे पिकाणा
 जागाए वरो तिन जे जिमारीबो बुबारो—गोठनि जो सुधारो ॥२॥
 बेइस्म रहनि अंध में—कूदि मुस्क जे बधि खा
 सइलीन जेई आम, कबो बूरि अंधारो—गोठनि जो सुधारो ॥३॥

जायू बि बरियूं छूटि हवा, पर न सकाई—बीमारि मम्राई
 जानून सिहत जा कबो होषनि जे सधारो—गोठनि जो सुधारो ॥४॥

जो छोट नहे पेट बुझ्यो, अंग उमाड़ो—जोमम में कुराड़ो
 कुड़िमीअ छे बेई झूठु नरो महुं मतारो—गोठनि जो सुधारो ॥५॥

पड़ेबाति में जा तगिबिली फूटि थी आणे, छिक ताबमें तणि
 भेलाप मुहिपत सां कंबो तहिछां किनारो—गोठनि जो सुधारो ॥६॥

मन-बूली पुसामीअ जी हटाइबो बिद्या सां, स्वराज्य सिख्या सां
 आठारु पिपलीअ जो बजाइबो नपारो—गोठनि जो सुधारो ॥७॥

'बेपति थो छरे बीबो जहहि रसम पुराणो बेकारि सा जाणो,
 यबांहु नरो बचनु ऐ पीसो न पियारो—गोठनि जो सुधारो ॥८॥

१९. ग्राम-सुधार

ग्राम-सुधार भारतमें नए रंगका दृश्य उपस्थित कर देगा ।
ग्राम-सुधार इस देशको नए ढाँचेमें ही बदल देगा ।

भारतीयोंकी बड़ी सख्या गाँवों और अस्तियोंमें ही रहती है और
ग्राम-सुधार अस्सी प्रतिशत जनतामें सुधार लाएगा ॥१॥

भारतकी जो कलाएँ उजड़ गईं और जो धन्धे नष्ट हो गए, विस्मृत
हो गए, ग्राम-सुधार उन्हें फिर बुधारा जगाकर जीवन-दान देगा ॥२॥

बिद्या-हीन होकर जो अपने देशकी अवस्थासे अनभिज्ञ हो गए हैं
और समाचार पत्रोंकी जानकारी से दूर हो गए हैं ग्राम-सुधार उन्हें
बिद्या-दान देकर प्रकाश देगा ॥३॥

मकान भी बड़ है वायु भी स्वच्छ है किन्तु सफाई न होनेके
कारण बीमारियाँ फैल गई हैं, ऐसे जगजगोंको ग्राम-सुधार स्वास्थ्यके
नियमास परिचित कराकर शक्तिवान बनाएगा ॥४॥

अपनी ख़ती-बारी करते हुए भी जो किसान भूखा और मगा है,
जबानीमें ही बुढ़ा बन गया है ऐसे किसानको ग्राम सुधार अन्न-दि दकर
हृष्ट-पुष्ट बना देगा ॥५॥

जो पञ्चायतोंमें फूल और खींचतान पैदा करती है उस तगदिलीको
ग्राम सुधार मिलाप और मुहृद्वतमे दूर करेगा ॥६॥

ग्राम-सुधार बिद्या द्वारा गुलामीकी मनावृत्ति दूर करेगा और
स्वराज्यकी गिला द्वारा आजाद बिचाराका नगाड़ा बजाएगा ॥७॥

बेबस (लाभार) होकर जब वह उन पुरानी रुढ़ियोंको बहार
समझकर त्याग करेगा तब वह अपना प्यारा समय और धन व्यर्थ बरबाद
न करेगा—ग्राम सुधार ॥८॥

२० वेसी हुनिर

हिम्नुवास्पुनि जे हुनिर छे हरि तरहि हिमिपाइबो,
 पौहजे मुत्की माल छे इ मुत्कमे बरिताइबो,
 मुंछे मुहिबत भाहि बेहदि पौहजे प्यारे बेस सां
 बेस जे छथे हुनिर हरि कारि छे हिमिबाइबो ॥१॥

बात मुँहजे विर्तु घायो आ विबेसी माल जो,
 मुत्क जो जाणी मिठो, बारो कुशीम सां खाइबो ॥२॥

मसि हुजे साबो पुत्तो मलि साब जो सोई हुजे,
 बेस पौहजे जो खयो, खहुरो कुशीम सां पाइबो ॥३॥

हिम्नुवास्पुनि जो जुबपस का सइ न जे मुयसर हुजे,
 कीम न कीम काटे समो जन शह बिना जकिसाइबो ॥४॥

जे हुनिर जे हिम्नुवासी, धी किरौई ध्या कपाल,
 तिन छे मरगूसी बेई, चाराइबो पहिराइबो ॥५॥

जे उप्पल हुंवी कक्रम में रीय हिम्बी लग्नुका
 लागु मरिजे बेदि 'जेवसि' जो शक्ती, दारिमाइबो ॥६॥

२० स्वदेशी हुनर

भारतीयोंकी कलाको हर तरहसे उत्साहित किया जाएगा । अपने स्वदेशकी वस्तुओंका ही बेसमें प्रयोग किया जाएगा ।

हमें अपने देशसे अत्यन्त प्रेम है । अतः देशकी कला हुनर और प्रत्येक कामको उत्साहित किया जाएगा ॥१॥

हमने विदेशी वस्तुओंक प्रयोग न करनका व्रत धारण किया है । देशकी खारी वस्तुका भी मीठा समझकर उसे काममें लाया जाएगा ॥२॥

चाहे कासा कम्बल हो या सोई अपने देशकी वस्तु मानकर उसे पसन्दतासे भोड़ा जाएगा ॥३॥

भारतीयों द्वारा निमित्त वस्तु यदि अप्राप्य हो, फिर भी उसके बिना किसी तरह समय काट लिया जाएगा ॥४॥

जो भारतीय बै-हुनर होनेक कारण कगल बन गए हैं उन्हें कोई न कोई काम देकर पालन-पोषण किया जाएगा ॥५॥

यदि हमारे कफनमें एक भी अभारतीय वस्तु बुनी हुई होमी, तो मरनक बाद हमारी लाश सज्जित होकर धरमा जाएगी ॥६॥

११ गंगा मू लहियूं

'कीअं सिखा' जाणो दगो 'छा लिखा' ससि तू,
कहुसि पुरी बांसुरी, फूकीबें गल तू,
पंघु करणु भुखा पुने, बाट बठी हलु तू,
बास मया बसु तू, हिन 'बेवसि' ऐं बे बीर जो ॥१॥

तो गल कूबया फूक सह, मूं बस कई पुरी,
काटे कूब ककूब मां, गायमि गव गरी,
सबाहिदा कूबि कूबबूह जी, मितर जीअ भौरी,
अभी होत होरी, करि हिरे में हेब सां ॥२॥

घनु खयाने कासि मां, मापुसि खूब खणी,
बेते अंबरि चाह मां, जोखी चिन्त मणी,
कांय दुग्या जे पोइता, हइ हइ छबियमि हनी,
क्रीमतबारि कणी, मू कणिका कड़िकाए कई ॥३॥

जातल तां सहजे पबे अज जातल जी जाण,
कुम्या बिसि जी बसिनी, बिलिबर हसन कोमि
भाछे भी गुण बसि छे, बहिरे भी बांटाणि,
बाकल जी काराण, बाह बिए कुल बसि छे ॥४॥

मूं कयो महिबब सां मयल जो माणो,
अभी बिपाइ मोबितो, मुहबत मांघाणो,
वज्जी विलोइ में पियो दहिबनि जो टाणो
बडो दाल खाणो, चोछो निकिरे चित मां ॥५॥

५१ गंगाकी लहरें

किस प्रकार लिखूँ ?—आनता हूँ । क्या लिखूँ ?' सिर्फ़ इसे ही तुम बता दो । मैं बड़ी बजाऊँगा लेकिन मेरे गाल तुम ही फूलाओगे । मैं राह चल सकता हूँ लेकिन तुम मार्ग प्रदर्शन करो । हे इपानिषे ! तू ही इस बेवस और निर्बलका बल है ॥१॥

वांसुरी बजानेके लिए तुमने मेरे कपोल प्रफुल्लित किए और मने वांसुरी बजाई । मन अपने हृदयसे सारा कलुष धो डाला । हे प्रियतम ! अब आकर मेरे हृदयमें सोम्नास होली खलो ॥२॥

विशिष्ट धन निधिसे बड़ी चाह और चेतनासे अति सुन्दर चिन्ता मणि से आया हूँ किन्तु अपसोस । सांसारिक मायासे आकृष्ट होकर मैंने उसे फेंक दिया । हाय मेन इस अमूल्य मणिक टुकड़े कर दिए ! ॥३॥

ज्ञातसे अज्ञातका सहज ही ज्ञान हो जाता है । प्रियतमके वर्णनके लिए ससार खपी हृदय मुकुर है । रूपचमित्रका ही मुख प्रदान करती है और ससारका दुःखमय बखनवालेको कालिमा ही दिखाई पड़ती है ॥४॥

मन अपने प्रियतमसे मन्थनके लिए मान किया, लेकिन उसन तो अचानक प्रेमकी मधानी ही डाल दी । आम्बोइन आरम्भ हो गया और रब्र गया ठहाकोंका समा । प्रभु ऐसा करे कि मन्थनकी खासी दड़ी इसी निबल आए ॥५॥

બિછોડે તે ધસુલ જો, જાવહિં વર્ષો પાડ,
મુહિબત માઠાઈ કરી, સિક્કણ બિઝાપો સાડ,
વેસદિ જાં બિ વરો રહ્યો, ફૂરીમ જો ઘણિકાડ,
પાલીમ મેં રમુ પાડ, ત આનો શાણ મંદ મેં ॥૬॥

બેહરિ જો રહ્યાંડમેં, જોંહજો અમ્મુ ન પાદ
મટલ સુપ્ટો મેમ સાં, જણો જોંહ સસાર,
દિસિ જો હેરે તે જખ્યો સો જુદિ જયસુ જાર
દ્વદ઼ અજબુ દ્વસિરાવ, મીંહં વધો હીં નાવ જે ॥૭॥

મૂ જા કુનિયા માંઈ, સા સુરત સુપેયાં,
અમ્મુનિ માં અંધિકાર જા, કટર જે કેપ્યાં,
સાઝાહિ સમુલ સહી કર્યાં, જે સુમરિણો સોપ્યાં,
મન-મનિજો ફેપ્યાં, ત દિસિ રસનજે શીર મેં ॥૮॥

‘માં’ વૈદા થી ‘માં’ મસાં, આનદ મસાં આડં,
જોંહ બિઝાપો નિતિ જે, નાંહિ મયાં પ્યો નાડં
ક્તર્તા જુરિબાનીમ સંબો, રાહો રિપ્યો જાડ,
ગદ્ ગદાપુરિ જો નાડં, થો છકનુ જોંહિ છિન મેં છદિયો ॥૯॥

‘માં’ વૈદા થી ‘માં’ મસાં આડં મસારાં આડં
આરો આપુતિ આડં જે, પ્યો પાછી તે નાડં,
જાણુ-રાદ જાણશદ પ્યો, સુલ-નગલ કુલ નાડં,
ફિયિ હંસરામુ જિષુ કાડં છા મોતી, મધુ છા સ્મો ॥૧૦॥

पड़पा चढ़पा कीमकी, अड़िया अण्णागी,
 पारि न पहुता तारि माँ, तर्पा न तांघे,
 सहस न भांवा सोर ते, साह संवे सांघे,
 सत्ताड़पा कांघे, लहियुनि लोड़े लोड़िया ॥११॥

बेई बरबी कीमकी, तूं हबड़ करि उजिरी,
 ठहियो ठहिकनि कीम पा, घूंवर ऐ गुधिरी,
 सा भगिरो सौ सास जाँ, जा साइत सख सुधिरी,
 बेवसि जाति सुधिरी, पर रहिणीम हेठि रह्यो रहे ॥१२॥

पड़े हुए विद्वान बड़ न सके । उल्टे अस्त्रंधमीयमें अड़ गए ।
 गवाहसे पार न पहुँच सके और छिछलेमें भी तीर न पाए । सहस्रों मृत्युके
 मयसे प्रवाह तक ही न पहुँचे कई पद-दलित हो गए और कद्योंको लहरोंन
 डुबो दिया ॥११॥

बीठा हुआ समय लौटकर नहीं आता । अतः भविष्यको
 उज्ज्वल बनानेका प्रयत्न करते रहनेमें ही बुद्धिमानी है । बीठा हुआ
 जीवन और आनेवाला भविष्य ये जीवनके ऐसे दो छोर हैं जिन्हें जोड़ा
 नहीं जा सकता । यह सत्य सदियोंसे यों ही चला आ रहा है । ऐसी
 स्थितिमें 'बेबसि' जी का यही कहना है कि भविष्यको सत्प्रयत्नोंमें
 सतत लीन रहना चाहिए ॥१२॥

२२. फना में बका

- न बुझ्बुलि हुस्म गुल ते भुसु बहारी ये बका आहे,
मिशाकत रग रोनक जो, घड़ीम खिन सह सका आहे ।
- बिमान में घेट धां पहि पहि बटे के रोज ही बहि यहि,
जिजा बबरो करे टहि टहि, फना आहे कना आहे ॥१॥
- सर्बी धी साब मां सात्युं, बिरह बायूं करे बात्युं,
दिछोड़े जू यबियूं रास्यु सफा बबबियूं 'जफा आहे ॥२॥
- पुकारे धो कक्रमु खाली, हमेगह नाहि कबिहाली,
फिरो सय्याहु ये, मास्तही, अगवु बरिखी कजा माह ॥३॥
- पटे बिमु गाह मां पतिरो, मयां बहि माक जो कतिरो,
ससींदो खिबगो कतिरो, न हस्तोम ये जटा आहे ॥४॥
- बुंहिब बुत्बुलि बिसो कचो बयो गुल "हाइ बेबरीं !
हकीही इश्र मबरि भी, मिजाखोम जो मुबया आहे ॥५॥
- जमानो आहि जागनि सह बहायों बायु बागनि सह
बया बुत्बुलि मिमायनि सह, धयल गुल में बगा आहे ॥६॥
- फुड़े में समुंड ब्यो सात्री, रहे कानीम मबरि घात्री
फिरे 'बेबसि रगो खाली ! मगरि जाधो सबा आहे ॥७॥

२२. नद्वरतामें अनद्वरता

ऐ बुलबुल ! फूलक सौन्दर्यपर मत भूल । यह आनन्द नद्वर है ।
सुकुमार और रंग-विरगी छटाका वणिष्य क्षण भरके लिए है ।

बगीचेमें बसन्तकी बकाचीं छ दो-चार दिनोंके लिए हैं फिर
पतझड़ ठहाका मारकर बहेगा कि यह सब फना है नद्वर है ॥१॥

बड़े ही लाड़ने साथ बहक रही हो और बिछुकी बातें कर रही हो,
सब बियोगकी लम्बी-लम्बी रातें स्पष्ट कहेंगी—'यह सब जफा है ॥२॥

खाली पिंजरा बह रहा है कि बमब और समृद्धि सदा नहीं
रहती । माली बग्सर आखटक बनकर फिर रहा है । आश्चर्य !
यह मृत्यु बड़ी भयानक है ॥३॥

किसी ओस बिन्दु युक्त घाम पासको उठाकर देखो । वह बताएगा
कि जीवनको भय लगा रहता है और अस्तित्वकी स्थिरता नहीं है ॥४॥

बुलबुलकी घोंघ मपी बँधीको देखकर फूलन बहा— हाय
कठारता ! इदक हकीकी (प्रभु प्रेम) में भी मिजाजी । ॥५॥

जमाना कौओंके लिए है और बगीचा भी कष्टोंके लिए ही
फूला है । बुलबुलने बहा—अमागोंक लिए फूलमें भी घावा है ॥६॥

ए साजी बूँदमें ही समुद्र समाया हुआ है । नद्वरताम ही
अनद्वरता छेप है । 'बेबसि' तो घाकी (मृत्यु शोक बासी) बनकर बिबर
रहा है मगर जानी (प्रभु) नित्य है ॥७॥

६३ सामुंझी सिपूं

वियों पुरु

पुत्तु गंगा प्यान जी भी अमृती बेसे वहे
 जो सचो टोखो हुजे सो भसि असुनु मोती सहे ।
 कोअ न बीरों जगि जारी, धम राजनि वासिसे ?
 जो किताबो कह सइ, बी तल्ल बिसि जे तां सहे । ॥१॥
 मनु त पाणीअ नां हुमेअह बहुक हेठाहीं बटे
 पर बिबेका पम्प तां बबिजी मयाहीअ ते वहे ॥२॥
 प्यो उजड़ु बिसि जो मम्बर बिसिअर जो घब बेरानु माहि,
 कामु राजा जिति वसे किअं रानु बेचारो रहे ? ॥३॥
 सल्लु पित्तु बर्तासि में कहि राति सबाइपुनि मां उषी,
 बिपु त बाहिरि बे अमनि सइ बैसु छा छा बी वहे । ॥४॥
 बहे बी बेवो करे बी मनुष्य बे मासा उत्तमु,
 बिपु तुहनि छां अमु मामो गाह में जिम जिम गहे ॥५॥
 अज धरोअनि अं कप्यायूं भूपिइपूं मासिअ पुने,
 जो महीअ मसिजिब, मम्बर, बेवसि टिकाणे नां टहे ॥६॥
 अवि चक्कर में लबनि उल्लसीम संबो इमिकानु या,
 मसिसे बहिरि ठहण सइ जाइ भूनी बी बहे ॥७॥
 आत्मा कपी मंबर में बी अमर जोती जये,
 कोय दुहिना प्या बहिसिअनि भीतु बी मिट्टो सहे ॥८॥
 भूं पचाए कासि गोड़ा दीर जा मोतो कया
 कम साराओ परिउ वसि, कीतरि बही कोहिपू बहे ॥९॥
 हसु त गुल तावा टियेअ अर्जेनि अग्यां बेवसि धपूं,
 कोम बूमागसु, कबो बी पुपु ठाकुर सइ ठहे ॥१०॥

२३ समुद्र-शुक्तिर्गी

सनक शूसरी

अमृत वला (प्रातः काल) में शान गंगाकी गुप्त धारा प्रवाहित
ती है। सच्चे गोताघोरको असली मोती प्राप्त होती हैं।

धम और राज्योंके नामपर युद्ध क्यों न छिड़ेंगे? जब कि
योंकी कैदमें बन्द होकर (मानवको) हृदय सिंहासनसे उतारते हैं ॥१॥

मन तो पानीकी तरह सदा निम्नगामी रहता है। लेकिन विवेक
की पम्पके जोरसे ऊँचाईपर उठता है ॥२॥

हृदय-मन्दिर उजाड़ हो गया है और प्रियतमका घर वीरान है। जहाँ
राम (तप्या) राजाका निवास हो, वहाँ बेचारा राम कैसे रह सकता है ॥३॥

किसी रात सस्तु सर्बों और बारिशमें अपनी सौर (सिंहाफ) से उठकर
जो कि बाहर निराधितोंके ऊपर क्या-क्या अत्याचार हो रहे हैं ॥४॥

दर्दकी देवी ही मनुष्यको उल्टा बनाती है। तुपासे अन्न तभी
लगा हाता है जब वह मोड़ा जाकर कष्ट सहता है ॥५॥

बाज प्रभु गरीबोंकी घास-फूसकी झोपड़ियोंमें घूम रहा है और मन्दिर,
सबिद टिकाने * देवल और मढ़ी आदि से विरत हो गया है ॥६॥

यौनियोंके बककर में उन्नति की सम्भावना मानी जाती है।
पुराना मकान सुन्दर बमनेके लिए ही टूटता है ॥७॥

हृदयमें आत्माकपी अमर अ्योति जग रही है पुराने कोश (आवरण)
लुप्त रहते हैं मृत्सु तो मिट्टी (शरीर) ही प्राप्त करती है ॥८॥

मन विशेष अभुओंको पकाकर ही काव्यके मोती निमित्त किए हैं।
मृत्पाकन तो सराफके हाथ है चाहे वह उसे मूल्यवान समझे या दो
हौदियोंका वहे ॥९॥

बसो, ताजे घिसे हुए फूस करणोंमें अर्पित करें, मुरझाया हुआ फूस
या अधिकसित पुष्प ठाकुरको अर्पित करना उचित नहीं है ॥१०॥

* छिद्रियोंका वह पुकारवान जिसमें एक नामके 'यूक पम्प माह' की
स्थापना की जाती है। इसे टिकाने के विशिष्ट नामसे पुकारा जाता है।

तेहों पूर

छा कबी तबिबीर उति, जिति सहसु बिसि समाहु आहि,
बुन्दुबुन्दुनि सो बाध में अज् अज् पुछो बेदाहु आहि,
बुंद शबनम में बिसो मज्जुसो हयासीम जो बिसी,
ठिबगी कहिये अंबरि आबाहु ऐ बरिबाहु आहि ॥१॥

कासि सागापो तके जो इस्क आमोम में अडघो,
सो बबनु बुनिया बिही जो बर में आबाहु आहि ॥२॥
मम जे परे मां निकिती बाहु नाबिहु बर बी,
कहिड़ी कहिड़ी तीहिजे हेठा ऐ प्रसक क्रियाब आहि ॥३॥

प्याम जो मुरिली बने होवा मम्बरमें धूम सी
अज न बिबिराजन सबो ऊघो ! अप्यो सो बाहु आहि ॥४॥

अइम रोझन साइ हरिजा फेससुली बी नचे,
एनकी अखि लइ मगरि केदो कितायी बाहु आहि ॥५॥
जिक सां फोसा कजे हर हयि दीरीं बी समे
पर असां में तो जिहो जखिबी किये करिहाइ ! आहि ? ॥६॥

पुनि लजा बुनिया मुंह तां साहि बुज बसीं मज्जाम्
सुख बसै लइ हर बुनिया बिसिदना बिसि दाबि आहि ॥७॥

छा संदसि तन्बीह 'बेयसि' भाह सायां से कजे,
बइ प्यो मागिजनि लइ पुरि पुरा आबाहु आहि ॥८॥

सनक तेरहवीं

जहाँ आखटक बड़ा कठोर हुय है वहाँ युक्ति किस कामकी ।
आज बुलबुलें साथ निदधम हो बड़ा अत्याचार ह ।

ओस-कणमें नवनी जीवनका आभास देखा । यह जीवन एक ही
क्षणमें आबाद और एक ही क्षणमें बरबाद हो जाता ह ॥१॥

विशेष मन्त्रघटा त्याग कर जा विश्व प्रेममें मग्न ह वह इह-
लाक और परलाक बन्धनोंसे मुक्त ह ॥२॥

रहस्यके परबम सबकी बड़ी मुकामल कराह निकली । ए आकाश!
न मापूम तुम्हारे नीच क्या-क्या प्रगियाद है ! ॥३॥

सबाक मन्दिरमें बड़ी ही धूममें श्यामकी मुरनी बज रही है
लबिन उद्वह ! आज बृम्हावनमें वह न्याय नहीं है ॥४॥

जानकी आँगोंक लिए प्रत्येक स्थानमें वागनिकता नाच रही ह
लेबिन एककी आँखबालाक लिए प्रन्योंका विलण्डाबाज है ॥५॥

यदि ध्यान आर चिन्तास खाजकी जाए ता प्रत्येक बम्पुमें माधुय मिलता
है लबिन ए फरहाद ! तुम्हारी जमी भाबुकता और जजबा हममें कहीं ? ॥६॥

इस मुखपूण समारक मुखसे दुःखपूर्ण आचरण हटा दें तो यह
समार रूपी प्रमिल अप्सरा आनन्दमय है ॥७॥

क्या उसकी उपमा चन्द्रमामे दी जाए ? लबिन प्रमियोंक लिए
मुन्युत्तम प्रभु स्वयं बिगजमान है ॥८॥

ओबिहों पुर

पुणु घेइ बिलि जे मम्बर में प्रेम पूजा वासिते,
 साणु साणु अढा फुसनि मुठि भोग भेटा वासिते ।
 मिसु हसी महाराज जे मुहताज जे अहिस्त्राज में,
 गोलि का बरौ कुखी बिलि इयाम बोवा वासिते ॥१॥
 कोण बुनिया ते न हणु हीरे कणी चिस्तामणी,
 बनु मिस्यो आबनु बघ्ये आतम उत्तमता वासिते ॥२॥
 मुमु न मजहज मुकितस्क खां यणि मंजरि यबिराइजी,
 वागु बुनिया जा जुबा गुस सुहं सोस्या वासिते ॥३॥
 टों पटी तो तुर्तु सबहों मूं जबहि बटपूं बई,
 माहे सोमाई बराए अइम योना वासिते ॥४॥
 जाह केरे छोट तां केरे भी कोटां कोट में
 आहि उवाहिना में फराबी मोट मगा वासिते ॥५॥
 हर रविदा मंजरि हुअनु बरिकाारि हरिकाारि में
 ती मिना हर बीज बुनिया जाह चिस्ता वासिते ॥६॥
 बीब डूरी भी पसाए पर न वेसदि ते बहे,
 कोन सो बार' मुझे हिन बिब मोत्या वासिते ॥७॥
 सास मंजरि सासु हो सासनु सिकाए बिअ सघे,
 मा उछल आनख जो, बघ्यो नाउं माया वासिते ॥८॥
 बाइरे इमिजान यां तूं सामसानु बाहिरि रहों,
 माहि मायेरो न कहि भी जाइ अमका वासिते ॥९॥
 पुर न हरगिज घुमं मंजरि माकसाईम जो निगानु,
 क्रिऊ बेवसि' करि फना तलबो लमप्रा वासिते ॥१०॥

सनक चौबहरी

प्रेम-गूजाके लिए हृदय मन्दिरमें कई गुप्त प्रवेश-द्वार हैं भोग धरने और भेंटके लिए अपने साथ यज्ञाकी पुष्पाब्जलि लो ।

महाराज (प्रभु)से किसी गरीबकी आवश्यकता पूर्तिमें ही चलकर मिलो । दयामयी सबाके लिए किसी दर्द भरे पीड़ित विरुका बूँड़ो ॥१॥

इस काक रूपी संसारपर चिन्तामणि रूपी हीरा कभी मत फरो दम प्राप्त होनेपर ही आदम बने हो आत्मिक उन्नतिके लिए ॥२॥

विभिन्न धर्मोंका साहस्य देखकर न घबराओ । संसार रूपी बगीचेके भिन्न-भिन्न फूल खाओ और सुन्दताके लिए हैं ॥३॥

जब मैंने दोनो(मिजाजी)आँखें बन्द की तब सून मरा सीसरा नश्र(प्रशाचक्षु) घोस दिया । शान-अलुओं द्वारा ही सच्चा बुद्ध दृष्टिगोचर होता ह ॥४॥

तृष्णा ऊपर उठाकर फेंक दती है और कराँडों यानियामें घुमाती रहती है । अनुप्यका गिरानबासी वासना ही तो बुरी है ॥५॥

प्रत्येक कार्यक अन्दर तृष्णा और वासना समाई हुई ह । तुम्हारे सिवाय प्रत्येक वस्तुकी इच्छा तृष्णा रूपी चिन्ताके लिए है ॥६॥

दृष्टि दूरीकी ही दिग्गती है निबटताको नहीं । मुझ इन मानिया बित्तके लिए कोई औपधि नहीं मूसनी ॥७॥

सालक अन्दर भी शरार था जिस साल (प्रियतम) छिपा न सबा । (मृत्तिका उद्भव) उसक आनन्दकी तरंग हैं और माया उस आनन्दका नाम है ॥८॥

ऐ बयर (स्थानहीन) । तू स्थान क घरमें बाहर है । अनडा' पक्षीके लिए न तो बड़ी घोंसला है और न स्थान ॥९॥

कभी कुछ न माँगा, क्यानि दस भाग (भाष-यनता)क अन्तरही निवृष्टताके बिह्न ह । अतः तृष्णा और घामनाका फना (मार्ग) बन दो ॥१०॥

